ज्यौतिषशास्त्री परीक्षापाठ्यग्रन्थ

समर-सारः

सविशेष-सोदाहरण-भाषार्थसहित

व 113

2227

टीकाकार—

दैवज्ञवाचस्पति-श्रीवासुदेव गुप्त

186
15244

श्री अन्नपूर्णा प्रकाशन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Δ:86 १६२१
15244
{स्थान
१५/८/२...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Δ:86
152L4
१६२९

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

12/5/82

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय, वाराणसी।
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Δ:8.6
15244
१६२१
१५|८|२..

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समर-सारः

काशीस्थ-श्रीकाशीज्योतिर्विद्समितिमन्त्रिदैवज्ञवाचस्पति

श्रीवासुदेवगुप्तेन

सविशेष-सोदाहरण-हिन्दीभाषार्थसहितः।

वाराणसेय-संस्कृतविश्वविद्यालयीयसम्मानितप्राध्यापकेन

आचार्य श्रीसीतारामशर्मणा

संशोधितः।

प्रकाशक—

श्री अन्नपूर्णा प्रकाशन—वाराणसी।

[मूल्य रु. २५ न. पै.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकाशक—
श्री अन्नपूर्णा प्रकाशन
डी. १०/८४, विश्वनाथगली
वाराणसी।

Δ:86
15264

[पुनर्मुद्रणादिकाः सर्वेऽधिकाराः प्रकाशकाधीनाः]

❀ मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय ❀
वाराणसी।
आगत क्रमांक............1621............
दिनांक..

मुद्रक—भोला प्रिंटिंग वर्क्स, पियरी कलाँ, वाराणसी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राक्कथन

यह बात सर्वजन विदित है कि—संसार द्वन्दात्मक (दैवी और आसुरी शक्ति से मिश्रित) है, इसलिये सदा ही सर्वत्र संघर्ष ही देखने में आता है। प्राणिमात्र अपने-अपने सुख-साधन में लगे रहते हैं। सब अपनी उन्नति और विजय चाहते हैं। विजय के लिये संघर्ष को ही युद्ध या समर कहते हैं। समर में विजय पाने के लिये बल की अपेक्षा रहती है। बल के द्वारा एक व्यक्ति भी अनेक व्यक्ति को पराजित कर अपने वश में कर लेता है। बल समय और बुद्धि के अनुसार न्यून-अधिक होता रहता है, कहा भी है—"बुद्धिर्यस्य बलं तस्य"।

जब दो व्यक्तियों में वाद-प्रतिवाद उपस्थित होता है, उसमें परस्पर विजय पाने के प्रयत्न का ही नाम 'समर' है तथा बल का नाम 'सार' है। यदि समर में विजयप्रद सार (बल) का ज्ञान हो जाय तो सहज में ही शत्रु पर विजय प्राप्ति हो सकती है।

हमारे पूर्वजमहर्षियों ने अपने अनवरत अनुसन्धान के द्वारा ज्ञात किया कि—किस समय में किस प्रकार से युद्ध या वाद-विवाद में निश्चय विजय होती है, उसको लिख गये। उसके अनेक मुनियों ने अनेक (कालबल, स्वरबल आदि) भेद बतलाये हैं, उनमें प्रबल स्वरबल को माना गया है। स्वरबल भी विस्तृत है, जिनमें प्रमुख बलों (विधियों) को सोमयाजि श्रीरामचन्द्रने केवल ८५ श्लोक में संग्रह करके उसका नाम भी अन्वर्थ—'समरसार' रक्खा है, जो बम्बई से प्रकाशित हो चुका है और अत्युपयोगी होने के कारण फलित ज्यौतिषशास्त्रीय परीक्षा के पाठ्य ग्रन्थों में निर्धारित किया गया है। यद्यपि इसकी संस्कृत टीका भी ग्रन्थकार ने स्वयं की है, किन्तु विस्तृत और उलझी हुई होने के कारण विद्यार्थियों के लिये दुरूहसा समझ कर मैंने इस पुस्तक की सोदाहरण-सरल संक्षिप्त-हिन्दी भाषार्थ लिखकर प्रकाशित करवाया है कि यह पुस्तक रत्न सकल साधारणजन को सुलभ मूल्य में प्राप्त हो और सहज में इसका भावार्थ का ज्ञान हो।

अन्त में निवेदन है कि यदि प्रमादादिदोषवश कहीं कुछ त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन कृपया सुधार कर मुझे भी सूचित करने की कृपा करें—ताकि अग्रिम संस्करण में उसका सुधार कर सकूँ।

विनीत—वासुदेवः

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
मङ्गलाचरण	१
जयपराजय चक्र	३
कुल-अकुल कुलाकुलगण–	८
सर्वश्रेष्ठ-वर्णस्वर	९
ग्रह-राशि-नवांश-नक्षत्रस्वर	१०
द्वादशाब्दादि पञ्चस्वर	१३
मात्रास्वर	१५
योगस्वर और वर्णस्वरकाप्रयोजन	१७
युद्धादिमेंजयपराजयसमताका ज्ञान	१७
बालकुमारादिस्वरवशभूमिबल	१८
राशिवश-दिग्बल	१९
सूर्य से आहत दिशा	२०
चन्द्रसे हत-दिशाविदिशा और उनकी राशियाँ	२१
गूढ (केतु) ग्रहसे आहतविदिशा दिशा	२२
सूर्य और चन्द्रके पृष्ठादिभागमें रहनेपर जयपराजय लक्षण	२२
दिशाओंमेंचन्द्रकीस्थितिसेजयादिलक्षण	२३
पूर्वादिदिशाओंकीवायुसेजयादि लक्षण	२४
यामार्धद्विघटिकाराहुस्थितिसेबलाबल	२४
तिथियोंमें योगिनीकीस्थितिसेशुभाशुभ	२६
प्रतिपदादितिथियोंकीयोगिनियोंकेनाम	२७
राहु सहित योगिनीकेबलकी प्रशंसा	२७
रव्यादिवारमेंकालवेला अर्धयामदोष	२७
मान्दी अर्धयाम दोष	२८
युद्धयात्रादिमें वर्ज्यहोरा (घण्टा)	२९
अशुभयामार्धादिमें घातके स्थान	३२
ग्रहोंकी स्थितिसे आघातके स्थान	३२
सर्पाकारत्रिनाडीचक्रमें त्याज्यनक्षत्र	३३
पूर्वादिदिशाओंमें वारशूल	३४
सूर्यादिग्रहोंका अन्तर्भोगनक्षत्र ज्ञान	३४

विषय	पृष्ठ
राहुकालानचक्र	३६
नामकेआदिअक्षरसेनक्षत्रज्ञानार्थचक्र	३६
हंसचारकथनपूर्वक स्वरबल	४०
पूर्वादिपत्रश्वासचलतेसमयचित्तवृत्ति	४१
पृथिवीआदितत्त्ववहनेकेशुभाशुभफल	४२
अष्टदलकमलमें सूर्य चन्द्रवहन और प्राणवायु सञ्चार के घटघादिज्ञान	४२
युद्धादि आरम्भ में विशेषता	४४
प्रश्न में विशेषता	४४
सूर्यचन्द्रनाडीवहनसमयमेंकर्तव्यकार्य	४५
सुरतमें वशीकरण विधि	४६
सुरत युद्धबल	४६
द्यूत क्रीड़ा में विशेषता	४७
औषधियोंकेभक्षणधारणविजयलक्षण	४७
विजयसाधन	४८
जयपराजय ज्ञानार्थ कोटचक्र	४९
पाप, शुभग्रहोंकीस्थितिकेअनुसारफल	५१
यायी और स्थायीका कर्तव्य	५५
अथ सर्वतोभद्रचक्र	५१
वेध जानने का उदाहरण	५८
वक्र और मार्गगति ग्रहोंका वेधक्रम	५८
एकादि ग्रहोंके वेधके फल	५९
जन्मकर्मआदि नक्षत्रके वेधसे फल	६०
साधक-साध्य के ऋण-धनअङ्क ज्ञान	६१
प्रश्न से रोगी के साध्य-असाध्य रोग सम्बन्धी ज्ञान	६२
रोगियोंकेजीवनमरणकेप्रश्नमेंविशेष	६४
छायापुरुष दर्शन और उसके फल	६५
अन्य शकुन और उसका फल	६६
उक्त शकुनों की उपयोगिता	६७
ग्रन्थकार वंशपरिचय	६७

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

अथ

समर-सारः

मंगलाचरण

नत्वा गुरून्समालोक्य स्वरशास्त्राणि भूरिशः ।
वक्ष्ये युद्धजयोपायं धार्मिकाणां महीक्षिताम् ॥१॥
श्रीगणेशं प्रणम्यादौ वाग्देवीञ्च सरस्वतीम् ।
कुर्वे समरसारस्य भाषाटीकां मनोरमाम् ॥

मैं (ग्रन्थकार) अपने ज्ञानप्रद गुरुओं को प्रणाम करके समस्त स्वरशास्त्र ग्रन्थों को पुनःपुनः अवलोकन कर धार्मिक राजाओं के लिये युद्ध में विजय के उपायों को कहता हूं ॥१॥

बहुधा विदधे सदाशिवोऽत्र स्वरशास्त्राणि तदेकवाक्यतां तु ।
भगवानयमेववेद सम्यग्गुरुमार्गानुगतोऽपरस्तु लोकः ॥ २ ॥

सदाशिव (श्रीशङ्करभगवान्) ने बहुत प्रकार से स्वरशास्त्र को बनाया है। उन सबों में एक वाक्यता है, इस विषय को भगवान् शंकर स्वयं अच्छी तरह से जानते हैं। अन्य लोग तो गुरु परम्परा से ही जानते हैं ॥२॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वक्ष्याम्यहं यदिह किंचन सर्वसारमेतावदेव परिचिन्त्य नृपः प्रवृत्तः
एकोऽपि कोटिभटलोलपतङ्गदीपलोलां मुदानुभवतु स्फुटकौतुकेन ३

मैं यहाँ समस्त स्वरशास्त्रोंके सार को लिखता (कहता) हूँ। केवल एक इसी ग्रन्थ के विचार से अकेला भी राजा अपने सम्मुख आते हुए करोड़ों योद्धाओं को दीपक पर आते हुए पतङ्गों के समान अनुभव करता है ॥३॥

नैतद्देयं दुर्विनीताय जातु ज्ञानं गुप्तं तद्धि सम्यक् फलाय।
प्रस्थाने हि स्थाप्यमानैव वाचां देवी कोपान्निर्दहेन्नौचिराय ॥४॥

इस शास्त्र को कदाचित् भी दुर्जन व्यक्ति को नहीं देना (सिखलाना) चाहिये, क्योंकि दुर्जनों से रक्षित रहने पर ही ज्ञान सफल होता है। साधु (सरल) जनों से भिन्न व्यक्तियों को ज्ञान का उपदेश करने से सरस्वतीदेवी क्रुद्ध होकर उसको भस्म कर देती है ॥४॥

विनयावनताय दीयमाना प्रभवेत्कल्पलतेव सत्फलाय।
उपकृत्यनुचिन्त्यकानि शास्त्राण्युपकारस्य पदं हि साधुरेव॥५॥

विनय से नम्र व्यक्ति को दिया हुआ ज्ञान कल्पवृक्ष के समान सुफल देने वाला होता है। क्योंकि शास्त्र सब के उपकार करने के लिये ही बनाये गये हैं, और उपकार करने योग्य व्यक्ति सरल हृदय साधुजन ही होते हैं ॥५॥

इस ग्रन्थ में जैमिनि-महर्षि आदि द्वारा संकेतित अक्षरों से अङ्कों की संख्या कही गई है। यथा—

"क-ट-प-य-वर्गभवैरिह पिण्डान्त्यैरक्षरैरङ्काः।
निञि च शून्यं ज्ञेयं तथा स्वरे केवले कथितम् ॥"

क से झ पर्यन्त क्रम से १ आदि ९ अङ्क, ट से ध तक १ आदि ९ तक, प से म तक १ आदि ५ तक और य से ह तक १ आदि ८ तक अङ्कों का बोध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होता है । तदनुसार वाम क्रम से संख्या समझनी चाहिये । एवं संयुक्त अक्षरों में अन्तिम लेना चाहिये । जैसे क्ष=४ , क्र=२ इत्यादि ।

यथा—क=१	ट=१	प=१	य=१
ख=२	ठ=२	फ=२	र=२
ग=३	ड=३	ब=३	ल=३
घ=४	ढ=४	भ=४	व=४
ङ=५	ण=५	म=५	श=५
च=६	त=६		ष=६
छ=७	थ=७		स=७
ज=८	द=८		ह=८
झ=९	ध=९		
ञ=०	न=०		

जयपराजयचक्र

शं-मे-गं-गा-ग-ति-स्ते-द-ह-द-धितदधः सर्गषरढान्विनाचः
काद्यास्त्र्यालीष्वृते ङञमपि सुभटयोर्नामवर्णोत्थसंख्ये ।
खाप्ते शेषेप्यशेषे विजयपरिभवौ दाप्तिशेषे नवस्ते—
मासालोकारिजेता क्रमत इह मतोऽग्रचोऽग्रच इत्युक्तमाद्यैः ।।६।।

बारह आडी और सात ऊभी रेखा खींचकर प्रथम पंक्तिके कोष्ठकों में शं=५,में=५,गं=३,गा=३,ग=३,ति=६,स्ते=६,द=८,ह=८,द=८, धि=९ स्थापित कर इन अङ्कों के नीचे द्वितीयादि पंक्ति में सर्व (विसर्ग) तथा षरढ (ऋ ऋ लृ लॄ) विना अच् (अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं), एवं इनके नीचे की पंक्तियों में 'ङ ञ' को छोड़कर क ख आदि स्थापना करै तो "जयपराजय चक्र" बन जाता है । इस चक्र के द्वारा वादी प्रतिवादी (योद्धाओं) के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाम के अक्षरों से उठी हुई संख्या में २ का भाग देने से यदि शेष बचे तो विजय और अशेष(०) बचे तो पराजय समझना। इस प्रकार यदि उसी संख्य में ८ का भाग देने से न=०,व=४, स्तै=६,मा=५,सा=७,ली=३,का=१,रि=२ इनमें से कोई अङ्क शेष रहे तो जिससे जिसका आगे पड़े उसी की विजय हो, ऐसा आचार्यों ने कहा है ॥६॥

जय पराजय चक्र—

शं	मे	गं	गा	ग	ति	स्ते	द	ह	द	धि
५	५	३	३	३	६	६	८	८	८	९
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं
क	ख	ग	घ	च	छ	ज	झ	ट	ठ	ड
ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ	ब	भ
म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह	×	×
न	व	स्तै	मा	सा	ली	का	रि	×	×	×
०	४	६	५	७	३	१	२	×	×	×

उदाहरण—अर्जुन और कर्ण, इन दो योद्धाओं की जय पराजय देखने के लिये उपरोक्त चक्र के अनुसार—

अ+र+ज+उ+न+अ=अर्जुन ॥ क+अ+र+ण+अ=कर्ण ॥
५+३+६+३+६+५=२८ ॥ ५+५+३+५+५=२३ ॥

इन २८और २३में पृथक् पृथक् ख(२) का भाग दिया २८÷२=शेष०,२३÷२=शेष १। अर्थात् अर्जुन में शेष ० आने से अर्जुन की हार और कर्ण की विजय आती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एवं "दाप्तेशेषे" के अनुसार भी २८ और २३ में ८ का भाग दिया तो २८÷८=शेष४, २३÷८=शेष ७। अतएव यहाँ भी अर्जुन के अङ्क से कर्ण का अङ्क ही आगे पड़ा, अतः कर्ण की विजय सिद्ध हुई।

विशेष—कदाचित् इस उदाहरण से कोई यह सन्देह करे कि—अर्जुन और कर्ण में तो अर्जुन की विजय हुई थी, फिर यहाँ असङ्गत क्यों?

वास्तव में कर्ण अर्जुन से बहुत बलवान थे। तथापि युद्ध में अर्जुन की ही विजय हुई। इसका कारण यह था कि प्रथम दिन तो युद्ध में कर्ण की ही विजय हुई थी, किन्तु आगे चलकर श्री कृष्ण की सहायता से फिर अर्जुन की विजय हुई। इसलिए इस ग्रन्थ में तीन प्रकार के 'जय पराजय चक्र' (यथा—शम्सेगंगा, तुलारिभजती, अकचटतपयश) से विचार कर देख लेना चाहिये। क्योंकि आगे के २ और उदाहरणों से अर्जुन की ही विजय सिद्ध होती है। अतः अर्जुन कर्ण के युद्ध में अर्जुन को ही विजय श्री प्राप्त हुई।

इसलिए यदि दो प्रकार से विजय हो तो विजय; दो प्रकार से हार हो तो हार; एवं यदि एक से विजय, दूसरे से हार और तीसरे से साम्यता हो तो युद्ध होने पर अन्त में सन्धि होगी। ऐसा दैवज्ञ को विचार कर फलादेश करना उत्तम पक्ष है।

पुनः जयपराजयचक्र

अङ्कास्तुलारिभजतीधभुगानकाः स्यू
रूपैरतोऽक्षरमितो रहिते विधाय।

तस्मात्पुनर्दहृतिशेषबहुत्वतः स्या—
ज्जेता स एव बलपः सुधिया विधेयः ॥७॥

तु=६, ला=३, रि=२, भ=४, ज=८, ती=६, ध=९, भु=४, गा=३, न=०, का=१ इनको पूर्व की भाँति ही स्थापित कर नीचे पूर्वोक्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकार से अच् आदि लिखने से जयपराजय चक्र बन जाता है। जो नीचे दिया गया है। इसमें भी पहले की भाँति दोनों योद्धाओं के नाम के अक्षरों से उठी हुई संख्याओं के योग में पृथक् पृथक् १२ घटाकर जो शेष रहे उसमें ८ का भाग देने से जिसका अधिक शेष हो उसकी विजय समझना ॥७॥

पुनः जयपराजय चक्र—

तु	ला	रि	भ	ज	ती	ध	अु	गा	न	का
६	३	२	४	८	६	९	४	३	०	१
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं
क	ख	ग	घ	च	छ	ज	झ	ट	ठ	ड
ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ	ब	भ
म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह	×	×

उदाहरण—पुनः अर्जुन और कर्ण में जयपराजय देखने के लिए "तुलारिभजती" से—

अ+र+ज+उ+न+अ=अर्जुन ॥ क+अ+र+ण+अ=कर्ण

६+२+९+८+९+६=४० ॥ ६+६+२+३+६=२३

इन ४० और २३ में पृथक् पृथक् १२ घटाया तो ४०−१२=२८, २३−१२=११ हुआ। अब २८ और ११ में ८ का भाग दिया २८÷८ =शेष ४, ११÷८=शेष ३ बचे, अतएव यहाँ अर्जुन का अधिक शेष रहने से अर्जुन की विजय हुई।

प्रकारान्तर से जयपराजयचक्र

वर्गाष्टकांका दशतिघासकालारि तद्युतौ।
नाम्नोः सभाजितायां स्याद्विजयोऽधिकशेषके ॥८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द=८, श=५, ति=६, घा=४, स=७, का=१, ला=३, रि=२ इन अंकों के नीचे अवर्गादि क्रम से ८,८ वर्ग स्थापित करै तो जयपराजय चक्र बन जायगा। चक्र नीचे स्पष्ट दिया गया है। इसमें भी पूर्व की भांति नामाक्षरों से अंक लेकर संख्याओं के योग में पृथक् पृथक् ७ का भाग देने से जिसका अधिक शेष बचे उसी की विजय समझना ॥८॥

जयपराजय चक्र—

द	श	ति	घा	स	का	ला	रि
८	५	६	४	७	१	३	२
अ आ इ ई	क	च	ट	त	प	य	श
उ ऊ ऋ ॠ	ख	छ	ठ	थ	फ	र	ष
ऌ ॡ ए ऐ	ग	ज	ड	द	ब	ल	स
ओ औ अं	घ	झ	ढ	ध	भ	व	ह
अः	ङ	ञ	ण	न	म	×	×

उदाहरण—"दशतिघा" से पुनः अर्जुन व कर्ण में जयपराजय देखना है तो उपरोक्त चक्रानुसार—

अ+र+ज+उ+न+अ=अर्जुन ॥ क+अ+र+ण+अ=कर्ण

८+३+६+८+७+८=४० ॥ ५+८+३+४+८ =२८

इन ४० और २८ में पृथक् पृथक् ७ का भाग दिया,

४०÷७=शेष ५, २८÷७=शेष ० रहा, अतः यहाँ अर्जुन का शेष और कर्ण का अशेष (०) बचने से अर्जुन को ही जय प्राप्त होती है।

विशेष—उपरोक्त तीनों प्रकार के "जयपराजय चक्रों" द्वारा किन्हीं भी दो प्रतिद्वन्दियों में किसकी जय, किसकी पराजय, शास्त्रार्थ करने के लिए दो विद्वानों में शर्त बदी है इसमें किसको विजय प्राप्त होगी इत्यादि २ बातों का इनके द्वारा समुचित निश्चय हो सकता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुल अकुल कुलाकुलगण

मूलाद्राभिजिदम्बुपोडु दशमी षष्ठी द्वितीया बुधो
राज्ञाः सन्धिकरः कुलाकुलगणः स्थास्नोर्जयार्थं कुलः ।
मासाख्यास्थितभानि शेषतिथयो युग्माः कुजो भार्गवः
संघोऽन्योऽकुलसंज्ञको विजयते तस्मिन् प्रयातो ध्रुवम् ॥६॥

मूल, आर्द्रा, अभिजित् और शतभिषा नक्षत्र; १०।६।२ तिथि और बुधवार कुलाकुलसंज्ञक हैं। इसमें युद्ध होने से परस्पर में सन्धि होती है। मास बोधक—चित्रा, विशाखा, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढ़, श्रवण, पूर्वभाद्रपद, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिरा, पुष्य, मघा और पूर्वफाल्गुनी ये नक्षत्र शेषयुग्म अर्थात् (१०।६।२ को छोड़कर) चतुर्थी ८।१२।१४ तिथि तथा मङ्गल और शुक्रवार इनकी कुलसंज्ञा है। इसमें युद्ध होने पर स्थायी अर्थात् (जिसपर किसी ने चढ़ाई की हो और वह अपने स्थान पर स्थित हो उस) की विजय होती है। एवं अन्य नक्षत्र, तिथि, वारादिकों की अकुल संज्ञा है। इसमें यायी (चढ़ाई करने वाले) की निश्चय विजय होती है ॥६॥

अकुल, कुल, कुलाकुल संज्ञक चक्र—

यायी-जय	अकुल	स्वा. भ. श्ले. ध. रे. ह अनु. पुन. उफा. उषा. उभा. रो ॥ १।३।५।७।९।११।१३।३०।१५॥ रवि. सोम. गुरु. शनिवार
स्थायी-जय	कुल	पूफा. पूषा. पूभा. अ. पुष्य. म. मृ. श्र. कृ. वि. ज्ये. चि ॥ ४।८।१२।१४॥ मङ्गल. शुक्रवार
सन्धि	कुलाऽकुल	मू. शत. आ. अभि ॥ १०।६।२॥ बुधवार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्वांशे ऽङ्ग-वर्णस्वरः

पञ्चाशोऽङ्गस्वराः कछडधभवमुखेष्वङ्गाञव्यञ्जनेषु
स्युर्नन्दादेस्तिथेस्ते तिथिकलिलवतोऽप्यन्तराभागभाजः ।
नाम्नो बालः कुमारो युवसजरमृतास्त्वादिवर्णात्स्वरास्ते
सिद्ध्युत्कर्षो युवान्तोऽपचयइतरयोर्युद्धयतां द्विरामृताचि ॥१०॥

प्रथम पंक्ति की पंक्ति में अण् (अ-इ-उ) और एङ् (ए-ओ) इन ५ स्वरों को लिखकर उनके नीचे ङ ण ञ को छोड़कर ककारादि व्यंजनों को लिखने से 'अ' कारादि स्वर के नीचे क-छ-ड-ध-भ-व, आदि वर्ण (व्यंजन) होंगे (अर्थात् 'क छ ड ध भ व' इन अक्षरों का—अ, 'ख ज ढ न म श' का—इ, 'ग झ त प य ष' का—उ, 'घ ट थ फ र स' का—ए और 'च ठ द ब ल ह' का—ओ स्वर है) पुनः 'अ' कारादि स्वर के नीचे क्रम से नन्दा (१-६-११), भद्रा (२-७-१२), जया (३-८-१३), रिक्ता (४-९-१४ और पूर्णा ५-१०-१५) तिथियों को लिखें। इन प्रत्येक तिथियों में तिथि भोगमान का कलिलव एकादशांश) अकारादि स्वर का अन्तरभोग समझना। फिर यायी या स्थायी के नाम के आदि अक्षर (यदि संयुक्ताक्षर हो तो उसमें प्रथम अक्षर का स्वर जैसे—(श्रीधरमें-श, प्रतापमें-प, कृष्णमें क इत्यादि) का जो स्वर हो उससे आरम्भ करके क्रम से बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत स्वर समझना। इनमें बाल, कुमार और युवास्वर तक कार्य-सिद्धि में उत्कृष्टता होती है (अर्थात् बाल से कुमार श्रेष्ठ और कुमार से युवा अधिक श्रेष्ठ, अन्य दो (वृद्ध और मृत) में हानि (अपचय) होती है। इस प्रकार अपने युवास्वर में और शत्रु के मृतस्वर में युद्धादि करनेवालों की निश्चय विजय होती है ॥१०॥

विशेष—तिथि अन्तर भोग की गणना तिथि आरम्भकाल से ग्रहण करनी चाहिये। यदि तिथि मान ६० घटी हो तो उसका एकादशांश ५ घटी २७ पल १६ विपल, स्वल्पान्तर से ५ घटी २७ पल ही एक-एक अन्तर भोग समझना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्पष्टार्थ वर्णस्वर चक्र—

बाल	कुमार	युवा	वृद्ध	मृत
अ	इ	उ	ए	ओ
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	प	स	ह
नन्दा-१-६-११	भद्रा-२-७-१२	जया-३-८-१३	रिक्ता-४-९-१४	पूर्णा-५-१०-१५

उदाहरण—महेश और रमेश दो प्रतिद्वन्द्वी हैं। महेश रमेश से विजय चाहता है तो महेश के लिये युद्धमुहूर्त देखना है। वर्णस्वरचक्रानुसार-महेश के लिये भद्रातिथि बाल, जया कुमार और रिक्ता युवा स्वर हुआ। और रमेश के लिये रिक्ता बालस्वर है, अतः रमेश के स्वर से महेश का स्वर प्रबल है। एवं रिक्ता तिथि में प्रथम अन्तरभोग 'ए' कार का होगा, जो महेश के लिये युवा और रमेश के लिये बाल स्वर है। अतः इस समय में युद्ध प्रारम्भ करने से महेश की विजय होगी, ऐसा समझना चाहिये। एवं सर्वत्र।

ग्रह-राशि--नवांश-नक्षत्र-स्वर

भौमेनयोर्ज्ञशशिनोश्च गुरोर्भृगोस्ते
चेत्रे शनेरुदयिनोऽथ नवांशकेऽजात्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भारे करे तु परतोन्तिमभादिसप्त—
स्वादित्यतस्त्विवउमुखा अपि पञ्चकेषु ॥११॥

मङ्गल और रवि इन दो ग्रहों तथा इनकी राशियों का उदयस्वर 'अ'; बुध और चन्द्र के एवं इनकी राशियों का उदयस्वर 'इ'; गुरु और इसकी राशियों का 'उ'; शुक्र और इसकी राशियों का 'ए'; तथा शनि और इसकी राशियों का उदयस्वर 'ओ' होता है। (मेषादि राशियों में जो १०८ नवांश हैं उनमें) मेषादि से २४ नवमांशों का स्वर 'अ'; उसके बाद २१, २१ नवमांशों के क्रम से 'इ-उ-ए और ओ' स्वर समझना। तथा रेवती से ७ नक्षत्रों का 'अ'; पुनर्वसु से ५ नक्षत्रों का 'इ'; उत्तरफाल्गुनी से ५ का 'उ'; अनुराधा से ५ का 'ए' और श्रवणादि ५ नक्षत्रों का 'ओ' उदयस्वर है। इसके अनुसार ग्रहस्वर, राशिस्वर, नवमांशस्वर और नक्षत्रस्वर का विचार करना चाहिये ॥११॥ स्पष्टार्थचक्र —

ग्रह-राशि नवांश—नक्षत्रस्वर चक्र—

स्वर	अ	इ	उ	ए	ओ
वार-ग्रह	मंगल, सूर्य	बुध, चन्द्र	गुरु	शुक्र	शनि
राशि	मे. वृ. सिंह	कं.मि.क.	ध. मी.	वृ. तु.	म. कुं
नवांश	मे. ९. वृ. ९. मि. ६	मि३. क९. सि ९.	क९. तु९. वृ. ३	वृ.६ ध ९. म ६	म३.कु९. मी ९.
नक्षत्र	रेवतीसे ७	पुन. से ५	उफा. से ५	अनु. से ५	श्रव.से५

उदाहरण—ग्रहस्वर—महेश का ग्रहस्वर जानना है। इसके लिये नाम के आदि अक्षर से राशि बोधकचक्र, जो नीचे लिखा गया है के अनुसार महेश (मा. मी. मू. मे) की मघा से सिंहराशि हुई और सिंहराशि का स्वामी सूर्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है । अतः उपरोक्त चक्र में सूर्य 'अ' कार के नीचे होने से महेश का ग्रहस्वर 'अ' हुआ ।

राशिस्वर— रमेश का राशिस्वर क्या है ? जानना है तो (पे. पो. रा. री) के अनुसार रमेश की तुलाराशि हुई, जो ऊपर चक्र में 'ए' कार के नीचे होने से रमेश का राशिस्वर 'ए' हुआ ।

नक्षत्रस्वर— सुरेश का नक्षत्रस्वर जानने के लिये (गो. सा. सी. सू) के अनुसार शतभिषा नक्षत्र है, जो ऊपर चक्र में 'ओ' कार के नीचे रहने से सुरेश का नक्षत्रस्वर 'ओ' सिद्ध हुआ ।

नामके आदि अक्षर से नक्षत्र-राशि बोधक चक्र—

चु चे चा ला	अ. ४		इ. उ ए.	कृ. ३		का की	मृ. २.		ही.	पु १	
ली लु ले लो	भ. ४	मेष	ओ वा वी वू	रो. ४	वृष	कु घ. ङ छ	आ. ४	मिथु	हू हे हो डा,	पु. ४	कर्क
अ	कृ. १		वे वो.	मृ २		के को हा	पु ३		डी डू डे डो	श्ले. ४	

मा भी मू मे	म ४		टो पा. पी	उ ३		रा.री.	चि.२		तो.	वि.१	
मो टा. टी. टू.	पू. ४	सिंह	पू.ष ण. ठ.	ह ४.	कन्या	रू.रे. रो.ता	स्वा.४	तुला	ना.नी. नू.ने.	अनु.४	वृश्चि
टे	उ. १		पे पो.	चि २		ती तू. ते	वि.३		नो.या. यि.यू.	ज्ये.४	

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ये.यो भा.भी	सू.४		भो.जा. जी.	उ.३		गू.गे.	ध.२		दी.	पू.१	
भू.ध. फ.ढ़.	पू.४	धनु	खी.खू. खे.खो.	श्र.४	मक.	गो.सा. सी.सू.	श.४.	कुंभ	दू.थ. झ.ञ.	उ.४	मीन
भे	उ.१		गा.गी.	ध.२		से.सो दा	पू.३.		दे.दो. चा.ची.	रे.४	

द्वादशाब्दादि पञ्चस्वर

रूपाब्देष्वथ हायनर्त्तुषु च ते तत्कायभागान्तरा-
भुक्त्यावाच्यऽपरेयने त्व इरिमौ कृष्णान्ययोः पक्षयोः ।
राधे भाद्रपदे सहस्य इरिषाषाढे नभस्युर्मधौ
पौषेऽथैरपिशुक्र उर्ज्ज उदयी माघान्त्ययोरोस्तथा ॥१२॥

प्रभवादि ६० संवत्सरों में १२, १२ वर्षों के अकारादि स्वरों का उदय होता है। यथा-प्रभवादि १२ वर्षों में 'अ', उसके बाद १२ वर्षों में 'इ' इत्यादि ! यह द्वादशवार्षिकस्वर कहा जाता है । वार्षिकस्वर-प्रभवादि १, १ वर्ष में क्रम से अकारादिस्वर का उदय होता है। एवं ६ ऋतुओं के ५ भागों में अकारादि स्वर का उदय होता है। यथा (६ ऋतुओं का पञ्चमांश ७२, ७२ दिन) यह ऋतुस्वर कहलाता है। उत्तरायण का 'इ' और दक्षिणायन का 'अ' स्वर स्वामी होता है। मासस्वर—वैशाख-भाद्रपद और मार्गशीर्ष का 'अ'; आश्विन-आषाढ और श्रावण का 'इ'; चैत्र और पौष का 'उ'; ज्येष्ठ और कार्तिक का 'ए' तथा माघ और फाल्गुनमास का 'ओ' स्वर उदयी होता है। कृष्णपक्ष का 'अ' और शुक्लपक्ष का 'इ' स्वरस्वामी है। द्वादशाब्द-वर्ष-अयन-ऋतु-मास और पक्ष के एकादशांश प्रमाण से पूर्ववत् अन्तरस्वर के उदय होते हैं। जैसे द्वादशाब्द के एकादशांश $\frac{१२}{११}$ = १ वर्ष, १ मास, २ दिन, ४३ घटी, ३८ पल होते हैं। एवं सबके दिनप्रमाण के एकादशांश तुल्य अन्तर भोग जानना चाहिये ॥१२॥ स्पष्टार्थ चक्र—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वादशाब्दिक स्वर—

अ	प्रभ	विभ	शुक्ल	प्रमो	प्रजा	अंगि	श्रीमु	भाव	युवा	धाता	ईश्व	वहु	१२
इ	प्रमा	विक्र	वृप	चित्रा	सुभा	तारण	पार्थि	व्यय	सर्व	सर्वधा	विरो	विकृ	१२
उ	खर	नंदन	विजय	जय	मन्मथ	दुर्मु	हेमल	विलं	विका	शर्व	प्लव	शुभ	१२
ए	शोभ	क्रोधी	विश्वा	पराभ	प्लव	कीलक	सौम्य	साधा	विरोध	परिधा	प्रमा	आनंद	१२
ओ	राक्ष	नल	पिङ्ग	काल	सिद्धा	रौद्र	दुर्मति	दुन्दु	रुधिरो	रक्ता	क्रोध	क्षय	१२

वार्षिक स्वर—

अ	प्रभ	अङ्गि	ईश्व	चित्र	सर्व	नन्द	हेम	शुभ	प्लव	परि	पिङ्ग	दुन्दु	१२
इ	विभ	श्रीमु	बहु	सुभा	सर्वधा	विज	विलं	शोभ	कील	प्रमा	काल	रुधि	१२
उ	शुक्ल	भाव	प्रमा	तार	विरो	जय	विका	क्रोधी	सौम्य	आन	सिद्धा	रक्ता	१२
ए	प्रमो	युवा	विक्र	पार्थि	विकृ	मन्म	शर्व	विश्वा	साधा	राक्ष	रौद्र	क्रोध	१२
ओ	प्रजा	धाता	वृप	व्यय	खर	दुर्मु	प्लव	परा	विरो	अन	दुर्म	क्षय	१२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

	स्वर	
अयन—	इ	उत्तरायण—
	अ	दक्षिणायण—
ऋतुस्वर—	अ	वसन्त ऋतु के ६० दिन + ग्रीष्म के १२ दिन तक
	इ	ग्रीष्म ऋतु के ४८ दिन + वर्षा के २४ दिन तक
	उ	वर्षा ऋतु के ३६ दिन + शरद के ३६ दिन तक
	ए	शरद ऋतु के २४ दिन + हेमन्त के ४८ दिन तक
	ओ	हेमन्त ऋतु के १२ दिन + शिशिर के ६० दिन तक
मास स्वर—	अ	वैशाख—भाद्रपद—मार्गशीर्ष मास—
	इ	आश्विन—आषाढ़—श्रावणमास—
	उ	चैत्र—पौषमास—
	ए	ज्येष्ठ—कार्तिकमास—
	ओ	माघ—फाल्गुनमास—
पक्ष—	इ	शुक्ल पक्ष—
	अ	कृष्ण पक्ष—

मात्रा-स्वर

मात्रा नाममुखार्णजैव तु तदज्मंत्रादिसिद्धौ हलच्—
संख्यैक्यं तप संख्ययाऽच्चुभियशोः काद्येमि जीवः शुभे ।
पिण्डाज्मात्रिकवर्णार्कैक्यमहृते शेषे चमूसत्कृतौ
मात्रार्णाग्रहपिण्डजीवभगृहाजैक्यान्महद्यौगिकः ।।१३।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नामके आदि में जो अक्षर हो उसका जो स्वर (मात्रा) है, वही मात्रा स्वर होता है। मन्त्र यन्त्रादि की सिद्धि में इसका प्रयोजन होता है। एवं नाम में जितने व्यंजन और मात्रायें हों उनका योग कर ५ से शेषित करके जीवस्वर होता है (अर्थात् यदि १ शेष बचे तो अ, २ से इ, ३ से उ, ४ से ए और ५ = ० से ओ जीवस्वर समझना) एवं (यहाँ व्यंजन और मात्राओं की संख्या ग्रहण करने का क्रम यह है) अ आ इ ई इत्यादि अः तक क्रम से १, २ आदि १६ तक (जैसे—अ-१, आ-२, इ-३, ई-४, उ-५, ऊ-६, ऋ-७, ॠ-८, ऌ-९, ॡ-१०, ए-११, ऐ--१२, ओ-१३ औ-१४, अं—१५, अः--१६,) तथा क वर्ग के वर्णों में क्रम से १ से ५ तक, च वर्ग के ५, टवर्ग के ५, तवर्ग के ५ एवं पवर्ग में भी १ से ५ तक एवं यवर्ग (य, र, ल, व,) में क्रम से १ से ४ और शवर्ग के अक्षरों (श, ष, स, ह) १ से ४ तक संख्या लेनी चाहिए। यह जीव स्वर सब शुभ कार्यों में विचारणीय होता है। केवल मात्रा और वर्णों की संख्या के योग में ५ से शेषित करके पिण्डस्वर होता है—यह सेना सम्बन्धी कार्यों में उपभोगी है। एवं मात्रा, व्यंजन, ग्रह, पिण्ड, जीव, नक्षत्र, राशि—इन सब स्वरों के योग में ५ के भाग देकर शेष योगस्वर होता है, जो योगादि साधन में उपयुक्त होता है ॥१३॥

उदाहरण—यथा-महेशका मात्रास्वर आदि का विचार करना है तो—

मात्रास्वर— महेश का आदि वर्ण मकार में 'अ' मात्रा है, अतः अकार मात्रास्वर हुआ।

जीवस्वर—म + अ + ह + ए + श + अ = महेश

५ + १ + ४ + ११ + १ + १ = २३ में ५ का भाग दिया तो शेष ३ बचे, अतः 'उ' (तृतीय होने से) जीवस्वर हुआ।

पिण्डस्वर— महेश का वर्णस्वर इकार द्वितीय (देखिये वर्ण-स्वर चक्र पृः—१०) के अनुसार-संख्या २ तथा मात्रास्वर-अकार प्रथम होने से संख्या १, अतः इनके योग २ + १ = ३ यानि उकार पिण्डस्वर हुआ।

योगस्वर—महेश का मात्रास्वर 'अ' का १, वर्ण (व्यञ्जन) स्वर 'इ' का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२, ग्रहस्वर (नाम के आदि अक्षर से राशि बोधक चक्र जो पूर्व लिख आये हैं के अनुसार) महेश की सिंहराशि होने से (ग्रह-राशि-नवांश-नक्षत्र बोधक चक्र से) सूर्य का अकार प्रथम का १, पिण्डस्वर 'उ' का ३, जीवस्वर 'उ' का ३, नक्षत्रस्वर (महेश का मघा नक्षत्र होने से पूर्व कथित चक्रानुसार) इकार द्वितीय का २ तथा राशिस्वर का अकार प्रथम है अतः १ हुआ। इस प्रकार कुल का योग— १ + २ + १ + ३ + ३ + २ + १ = १३ में ५ का भाग दिया तो शेष ३ बचा, अतएव महेश का योगस्वर उकार हुआ। एवं सर्वत्र।

योगस्वर और वर्णस्वरका प्रयोजन

योगाचा योगभजनं वर्णाचा सर्वमाहवेत्।
विशेषतश्च संग्रामं स हि सर्वस्वराग्रणीः ॥१४॥

योगस्वर से योगक्रिया का साधन करना चाहिये। तथा सब कार्यों में विशेषकर युद्ध (वाद-विवादादि) में वर्णस्वर का विचार करना क्योंकि-वर्णस्वर सब स्वरों में अग्रगण्य (श्रेष्ठ) है ॥ १४ ॥

युद्धादिमें जय-पराजय या समताका ज्ञान

तेषामर्चां लयभरायमितिर्हलां च
नाम्नोरर्चां तु मिलिता महृता पृथक्सा।
हीना मृतिं विजयमाह तथाधिका सा
तुल्या समं च समरं यदि वाऽपि सन्धिम् ॥१५॥

अकारादि ५ स्वरों के क्रम से-३, १, ४, २, १ संख्या होती है। (अर्थात् पूर्वोक्त जयपराजय चक्र लिखने की रीति के अनुसार प्रथम पंक्ति में ल-३, य-१, भ-४, रा-२, य-१ लिखकर उसके नीचे अ, इ, उ, ए, ओ स्थापित करना) उनके नीचे "क-छ-ड-ध-भ-व" इत्यादि व्यञ्जनों को क्रम से लिखें तो जयपराजय चक्र होता है। इस चक्र के अनुसार वादी-प्रतिवादी के नामों के पृथक् व्यञ्जन और मात्राओं के अङ्कों के योग में ५ से भाग देकर शेष ग्रहण करें। जिसके नाम के शेष अधिक हो उसकी विजय, जिसका शेष अल्प

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हो उसकी पराजय और यदि दोनों के शेष तुल्य (बराबर) हो तो समता (सन्धि) होती है ॥ १५ ॥ स्पष्टार्थ चक्र देखिये।

जयपराजय.चक्र—

ल ३	च १	भ ४	श २	ष १
अ	इ	उ	ए	ओ
क छ ड	ख ज ढ	ग झ त	घ ट थ	च ठ द
ध भ व	न म श	प य ष	फ र स	ब ल ह

उदाहरण—अर्जुन और कर्ण, इन दो योद्धाओं की जयपराजय देखना है:तो उपरोक्त चक्र के अनुसार—

अ+र+ज+उ+न+अ ॥ क+अ+र+ण+अ

३+२+१+४+१+३ ॥ ३+३+२+०+३ इस प्रकार अर्जुन नाम संख्या १४ और कर्ण में ११, इनमें पृथक्-पृथक् ५ का भाग देने से अर्जुन का ४ और कर्ण का १ शेष रहा अतः अर्जुन का अधिक शेष बचने के कारण अर्जुन विजयी हुआ।

बालकुमारादिस्वरवशभूमिबल

पूर्वादिदिद्‌वन्तरगाश्च तेऽचः सुखं जयेद्यूनि जयस्तुघातात् ।
स्यादाद्ययोर्नान्तिमयोः स्वशत्रुबलाबलाभ्यां भुवमाददीत ।। १६।।

वे स्वर (अ-इ-उ-ए-ओ) क्रम से पूर्व-दक्षिण-पश्चिम और मध्य भाग में रहते हैं। इनके अनुसार युद्ध या विवादादि में अपने स्वर से क्रम से गिनकर युवास्वर की दिशा में स्थित होकर युद्ध या वाद प्रतिवाद करनेवालों की विजय होती है। बाल तथा कुमार स्वर की दिशा में परिश्रम (घातादि सहन) करने पर विजय होती है। तथा वृद्ध और मृतस्वर की दिशा में पराजय होती है। अतः अपने युवा और शत्रु के अन्य स्वरों को देखकर युद्धादि करना चाहिये ॥ १६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिशास्वर चक्र—

	पूर्व 'अ'	
उ 'ए'	म 'ओ'	द 'इ'
	प 'उ'	

उदाहरण—वाली और सुग्रीव दो योद्धा हैं। सुग्रीव वाली को मल्ल-युद्ध में पराजित करना चाहता है, तो सुग्रीव का (वर्णस्वर चक्रानुसार) 'ए' बाल' 'ओ' कुमार और 'अ' युवास्वर है। अतः सुग्रीव को अपनेयुवास्वर 'अ' की दिशा पूर्व में स्थित होकर युद्ध करना चाहिये।

राशिवश-दिग्बल

ऐशानीतः सितकुज-शनिरविखगराशयः प्रतीचीन्दोः।
गुरुगृहयो रक्ष उदग्-दिशौ ज्ञगृहयोस्तु वायव्याम् ॥१७॥

ईशान कोण से प्रारम्भ करके क्रम से शुक्र, मङ्गल, शनि और रवि की राशि बलवती होती है। यथा—शुक्र की राशियाँ (वृष-तुला) ईशान में, मङ्गल की (मेष-वृश्चिक) पूर्व में, शनि की (मकर-कुम्भ) अग्नि कोण में और रवि की राशि (सिंह) दक्षिण में बलवती होती है। तथा चन्द्रराशि (कर्क) पश्चिम में, गुरु की राशियाँ (धनु और मीन) क्रम से रक्ष (नैऋति) और उत्तर में एवं बुध की राशियाँ (मिथुन-कन्या) वायव्य कोण में बलवती है। योद्धा को चाहिये कि अपनी राशि की बलप्रद दिशा में स्थित होकर युद्ध-विवादादि करे ॥१७॥

राशि स्वर चक्र—

ई--वृ. तु.	पू--मे. वृ.	अ--म. कुं.
उ--मी.		द--सिंह
वा--मि. क.	प--कर्क	नै--ध.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूर्य सेआहत दिशा

द्वितीययामार्द्धत एव यामे-यामे तृतीयां च ततस्तृतीयाम् ।
अर्कः प्रतीचीप्रभृतीर्निहन्ति प्रागन्त्ययामार्धयुगेन याम्याम् ॥

दिन में ४ याम (प्रहर) होते अतः ८ यामार्ध होते हैं। उनमें दूसरे यामार्ध से प्रारम्भ करके एक-एक याम (दो-दो यामार्ध) में क्रम से पूर्वादि-दिशाओं की तीसरी, तीसरी दिशा (अर्थात् पश्चिम, उत्तर और पूर्व) को सूर्य आहत करता है। तथा प्रथम यामार्ध और अन्तिम (८ वें) यामार्ध में दक्षिण दिशा को आहत करता है। इसी प्रकार रात्रि के अर्धयामों में समझना चाहिये ॥१८॥

इसका प्रयोजन है कि—जिस यामार्ध में जो दिशा आहत हो उस दिशा में स्थित होकर कोई शुभकार्य या युद्ध विवादादि नहीं करना तथा उस दिशा की यात्रा भी नहीं करनी चाहिये। यहाँ तृतीय, तृतीय दिशा जो कही गई है वह पूर्वादि क्रम दिशाओं से समझना। जैसे— पूर्व से तृतीय = पश्चिम, दक्षिण से तृतीय = उत्तर, पश्चिम से तृतीय = पूर्व और उत्तर से तृतीय = दक्षिण। इस प्रकार तृतीय, तृतीय ग्रहण करने से प्रतीची प्रभृति दिशा होती है। दिनमान का ८ वाँ भाग १ यामार्ध होता है। चक्र में यामार्ध संख्या देखने से उदाहरण स्पष्ट है।

सूर्य से आहत दिशा चक्र—

	पूर्व ६-७	
उत्त ४-५		दक्षि. १-८
	पश्चि. २-३	

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चन्द्रसे हत-दिशाविदिशा और उनकी राशियाँ

ईशाद्विदिशां चन्द्रो यामे-यामे निहन्ति वृषकुम्भौ ।
मृगसिंहौ धन्विनमथ कन्यामिथुनौ क्रमेणैव ॥ १६॥

ईशानकोण से प्रारम्भ करके—प्रथम आदि याम (प्रहर) में क्रम से विदिशा (चारों कोण दिशा) को चन्द्रमा आहत करता है । तथा प्रथमादि याम (प्रहर) में क्रम से वृप-कुम्भ, मकर-सिंह, धनु, कन्या-मिथुन को आहत (घात) करता है । अर्थात् प्रथम प्रहर में ईशानकोण को और वृप-कुम्भ राशियों को, द्वितीय प्रहर में अग्निकोण और मकर-सिंह राशियों को, तृतीय प्रहर में नैर्ऋत्यकोण और धनु राशि को तथा चतुर्थ प्रहर में वायव्यकोण और कन्या-मिथुन राशियों को आहत करता है ।

इसलिये जिस समय में जो विदिशा (कोण) चन्द्र से आहत होता है, उस कोण में स्थित होकर युद्ध विवादादि नहीं करना चाहिये तथा उस समय में उधर की यात्रा भी नहीं करनी चाहिये । एवं जिस समय में जो राशि आहत हो उस समय में उस राशिवाले मनुष्य को कोई शुभ-कार्य नहीं करना चाहिये ॥ १६॥

चन्द्र से आहत दिशा चक्र—

ई—वृ. कु.	पूर्व	आ—म. सिं.
उत्तर		दक्षिण
वा— क. मि.	पश्चिम	नै—ध.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गूढनामक (केतु) ग्रहसे आहत विदिशा और दिशा

गूढाख्योऽर्धप्रहरैराग्नेयीतस्तथा दिवा निशि च।
षष्ठीं षष्ठीं हन्यात् तन्मुखयात्रा शुभां न रणे ॥२०॥

दिन के प्रथमादि ८ यामार्धं में अग्निकोण से प्रारम्भ करके छठी, छठी विदिशा और दिशाओं को गूढ (केतु) ग्रह आहत करता है। एवं रात्रि के ८ यामार्धं में भी समझना चाहिये। यथा—प्रथम अर्धयाम में—अग्निकोण को, द्वितीय में उत्तर को, तृतीय में नैर्ऋत्यकोण को, चतुर्थ में पूर्व को, पञ्चम में वायव्यकोण को, षष्ठ में दक्षिण को, सप्तम में ईशानकोण को और अष्टम में पश्चिमदिशा को आहत करता है। आहत दिशा में स्थित होकर युद्धादि नहीं करना चाहिये ॥२०॥ उदाहरण चक्र में लिखे यामार्ध संख्या से स्पष्ट है।

गूढहत दिशाविदिशा चक्र—

दि-७ ई. रा-१५	दि-४ पू. रा-१२	दि-१ आ- रा-९
दि-२ उ. रा-१०		दि-६ द. रा-१४
दि-५ वा. रा-१३	दि-८ प. रा-१६	दि-३ नै. रा-११

यथा—मदनमोहनलाल को शास्त्रार्थ के निमित्त दक्षिण यात्रा करनी है। दक्षिण दिशा में दिन का छठा और रात्रि का चौदहवां अर्ध-याम अर्थात् दिन वा रात्रि में तीसरे प्रहर का उत्तरार्ध त्यागकर यात्रा करनी चाहिये।

सूर्य और चन्द्र के पृष्ठादिभागमें रहनेपर जयपराजय लक्षण

पृष्ठेऽर्को यदि दक्षिणेपि पुरतश्छायाथ वामे जयः
किन्त्वर्के वहतीह यायिनि विधौ वाहस्थिते स्थायिनि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छाया पृष्ठगदक्षिणा निशि शशी वामेऽग्रतो वा जयो
यातुश्चन्द्रवहे परस्य तु रवेर्वामः शशीष्टः क्षयी ।२१।

दिन में जब सूर्य पृष्ठ या वाम भाग में रहता है तो अपनी छाया क्रम से सम्मुख (अग्रभाग) और वाम भाग में होती है। इस रूप से स्थित होकर युद्ध करनेवालों की जय होती है। किन्तु यहाँ यह भी समझना चाहिये कि दिन में सूर्यनाड़ी (दक्षिण नासिका स्वर) बहने पर स्थायी की और चन्द्रनाड़ी (वाम स्वर) बहने पर यायी की विजय होती है। एवं रात्रि में जब चन्द्रमा वाम या सम्मुख रहता है तो अपनी छाया क्रम से दक्षिण (दाहिने) और पृष्ठभाग में होती है। इस रूप से स्थित होकर युद्धादि करने से यायी (वादी) की जय, इससे विपरीत में स्थायी (प्रतिवादी) की जय होती है। तथा रात्रि में यायी की चन्द्रनाड़ी और स्थायी की सूर्यनाड़ी बहने के समय ही क्रम से दोनों की जय होती है। इससे सिद्ध है कि यदि दोनों की जय, या दोनों की पराजय लक्षण हो तो दोनों में सन्धि या दोनों की समान हानि होती है। इस प्रकार पूर्ण चन्द्रमा (शुक्लपक्ष की अष्टमी से कृष्णपक्ष की सप्तमी तक) से समझना। क्षीणचन्द्र हो तो इससे विपरीत में ही जयकारक होता है ॥ २१ ॥ उदाहरण अर्थ से ही स्पष्ट है।

दिशाओंमें चन्द्रकी स्थितिवश-जयपराजय लक्षण

प्राचीमुदीचीं वा चन्द्रे गते स्थायी जयी भवेत् ।
प्रतीचीदक्षिणादिक्स्थे यायी विजयमाप्नुयात् ॥२२॥

जिस समय चन्द्रमा पूर्व या उत्तर दिशा का रहता है उस समय युद्ध करने से स्थायी (प्रतिवादी) की जय और जिस समय पश्चिम या दक्षिण-दिशा का रहता है उस समय युद्धादि प्रारम्भ करने से यायी (वादी) की विजय होती है ॥ २२ ॥ उदाहरण चक्र देखने से स्पष्ट है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चन्द्रदिशा ज्ञान चक्र—		
	पूर्व— मे. सिं. ध.	
उत्तर— क. वृ. मी.		दक्षिण— वृ. कं. म.
	पश्चिम— मि. तु. कु.	

पूर्वादि दिशाओंकी वायुमे जयपराजय लक्षण

वायुः पृष्ठे दक्षिणे च वहन्सूचयते बलम् ।
सम्मुखीनश्च वामश्च भटानां भङ्गसूचकः ।।२३।।

युद्ध प्रारम्भ करने के समय यदि योद्धा के पृष्ठभाग या दक्षिण (दाहिने) भाग से वायु (पवन = हवा) बहे तो विजय और यदि सम्मुख या वाम भाग से वायु बहे तो पराजय का सूचक समझना चाहिये ॥ २३ ॥

यामार्ध और द्विघटिका राहु की स्थिति से बलाबल

प्राग्वातान्तकशम्भुपाशिहुतभुक्पौलस्त्यरक्षोदिशो
यामार्धैरगुरह्नि पाशिककुभोऽसौ षष्ठि-षष्ठीं निशि ।
पृष्ठे दक्षिणतः शुभो द्विघटिकोऽसौ तुर्यतुर्यांव्रज-
न्नोशावाक्पवनेन्द्रराक्षसहिमग्वग्निप्रतीचीदिशः ।।२४।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिन के प्रथम यामार्ध में पूर्व, द्वितीय में वायुकोण, तृतीय में दक्षिण, चतुर्थ में ईशानकोण, पञ्चम में पश्चिम, षष्ठ में अग्निकोण, सप्तम में उत्तर और अष्टम अर्धयाम में नैऋतिकोण में राहु की स्थिति रहती है। तथा रात्रि में प्रथमादि अर्धयाम में पश्चिम दिशा से आरम्भ करके छठी, छठी दिशा में राहु की स्थिति रहती है। अर्थात् रात्रि के प्रथम यामार्ध में पश्चिम, द्वितीय यामार्ध में अग्निकोण, तृतीय में उत्तर, चतुर्थ में नैऋत्य, पञ्चम में पूर्व, षष्ठ में वायव्य, सप्तम में दक्षिण और अष्टम में ईशानकोण में अर्धयाम राहु की स्थिति रहती है। [illegible] अर्धयाम राहु युद्धादिसमय में पृष्ठ और दाहिने भाग में शुभ होता है।

अत्र द्विघटिका राहु की स्थिति कहते हैं कि—ईशानकोण से प्रारम्भ करके चौथी, चौथी दिशा में (अर्थात् ईशान, दक्षिण, वायव्य, पूर्व, नैऋत्य, उत्तर, अग्नि और पश्चिम दिशा में) २, २ घटी राहु की स्थिति रहती है। यह भी पृष्ठ और दक्षिणभाग में शुभ है ॥ २४ ॥ स्पष्ट अर्थ और-उदाहरण चक्र के संख्या से स्पष्ट है।

दिवा राहु चक्र—			निशि राहु चक्र—		
ई. ४	पू. १	अ. ६	ई. ८	पू. ५	अ. २
उ. ७		द. ३	उ. ३		द. ७
वा. २	प. ५	नै. ८	वा. ६	प. १	नै. ४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्विघटिका राहु चक्र—

ई-१, २ घटी	पू—७, ८ घ.	आ-१३, १४ घ
उ-११, १२ घ.		द-३, ४ घ.
वा-५, ६ घ.	प-१५, १६ घ.	नै-९, १० घ.

तिथियों में योगिनी की स्थितिसे शुभाशुभ

प्राक्सोमानलरक्षो-ऽवाक्पाशीरेशदिक्षु दर्शान्तैः ।
तिथिभिस्तिथिपदतोऽर्द्ध-प्रहरैरिनवत्तु योगिनी शस्ता ।२५।

प्रतिपदा से पूर्णिमा और अमावास्या लेकर १६ तिथियों में क्रम से पूर्व, उत्तर, अग्निकोण, नैऋतिकोण, दक्षिण, पश्चिम, वायव्यकोण और ईशानकोण में योगिनी दो आवृत्ति से भ्रमण करती हुई वास करती है। और प्रतिदिन तिथि के स्थान क्रम से ही प्रथम आदि ८ अर्धयाम में योगिनी का वास समझना। ये दोनों प्रकार की योगिनी सूर्य के समान ही पृष्ठ और दाहिने भाग में शुभप्रद होती है ॥ २५ ॥ उदाहरण नीचे चक्र से स्पष्ट है।

तिथि योगिनी—

योगिनी दिशा.	पूर्व	उत्तर	अग्नि-	नैऋ	दक्षिण	पश्चिम	वायु	ईशान
	१	२	३	४	५	६	७	८
तिथि	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अर्धयाम योगिनी—

दिशा—	पूर्व	उत्तर	अग्नि	नैर्ऋ	दक्षिण	पश्चिम	वायु	ईशान
अर्धयाम	१	२	३	४	५	६	७	८

योगिनी दिशा जानने की सरल रीति—

पु-उ-आ-नै-द-पा-वा-ई-दिशासु योगिनी स्मृता ।
प्रतिपत्तः क्रमादेवं पृष्ठे दक्षिणतः शुभा ।।इति।

प्रतिपदादि तिथियों की योगिनियों के नाम

ब्राह्मी कौमारी वा-राही वैष्णव्यथैन्द्री च ।
स्याच्चंडिका च माहेश्वरी महालक्ष्म्यभिख्या च ।।२६।।

१ ब्राह्मी, २ कौमारी, ३ वाराही, ४ वैष्णवी, ५ ऐन्द्री, ६ चण्डिका, ७ माहेश्वरी और ८ महालक्ष्मी ये पूर्वश्लोककथित प्रतिपदादि तिथियों की योगिनी के नाम हैं ॥ २६ ॥

राहु सहित योगिनी के बल की प्रशंसा

पृष्ठे दक्षे योगिनी राहुयुक्ता यस्यैकोयं शत्रुलक्षं निहन्ति ।
श्रेष्ठं सर्वेभ्यो बलेभ्यस्तदेतत् संक्षेपोऽयं सर्वसारोऽभ्यधायि ।।

यदि राहु और योगिनी एक साथ हों पृष्ठ और दाहिने भाग में हों तो वह अकेला भी लाखों शत्रु सेनाओं का नाश करता है। समस्त विजयलक्षणों का सार और सब बलों में श्रेष्ठ संक्षेप में यह (राहुयुक्तयोगिनी का) बल कहा गया है ॥ २७ ॥

रव्यादिवारमें कालवेला और अर्धयाम दोष

हालान्तकाभसख-यामदलैस्तु कालः
सूर्यादिवासरगतो युधि वर्जनीयः ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भासारमेतिदल यामदलानि भानु-
वारक्रमादपि नरः स्वहितार्थमुज्झेत् ।।२८।।

रवि आदि वारों में क्रम से ८, ३, ६, १, ४, ७ और २ ये प्रहरार्ध कालवेला नामक होते हैं, इनको युद्ध यात्रादि में त्याग करना चाहिये । एवं रव्यादिवारों में ४, ७, २, ५, ८, ३, ६ ये प्रहरार्ध (दिनमान के अष्टमभाग) यामार्ध दोष कहलाता है, ये भी युद्धादि में अपने हितार्थ त्याग देना चाहिये ॥ २८ ॥

स्पष्टार्थ कालवेला चक्र—

वार-	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि-
अर्ध प्रहर	८	३	६	१	४	७	२

अर्धयामदोष चक्र—

वार-	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
अर्ध प्रहर	४	७	२	५	८	३	६

मान्दी अर्धयाम दोष

वारेशमैन्द्र्यां विनिवेश्य पश्येत्
प्रदक्षिणस्थानगतान् क्रमेण ।
यामार्द्धभोगाच्छनिरस्ति यस्यां
यदा न यायात्ककुभं तदा ताम् ।। २९ ।।

जिस वार में युद्धादि करना हो उस वार को पूर्व दिशा में स्थापित कर उसी वार के क्रम से प्रदक्षिण क्रम (पूर्व, अग्नि, दक्षिण, नैऋत्य इत्यादि) से सब वारों को रक्खे, पूर्व दिशा से प्रथमादि अर्धयाम गिनने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

से जिस दिशा में शनि पड़े उस समय उस दिशा में युद्ध यात्रादि नहीं करना चाहिये ॥ २९ ॥

उदाहरणार्थ—चक्र देखिये—जैसे मङ्गलवार को शनि का अर्धयाम किस दिशा में कौन सा होता है, यह देखना है तो मङ्गल को पूर्व में रखकर बुध आदि वारों को दक्षिण आदि में रखने से-मङ्गल से पाँचवां अर्धयाम शनि का पश्चिम दिशा में पड़ा। अतः मङ्गलवार को ५ वें अर्धयाम में पश्चिमदिशा की यात्रा नहीं करनी चाहिये ॥ २९ ॥

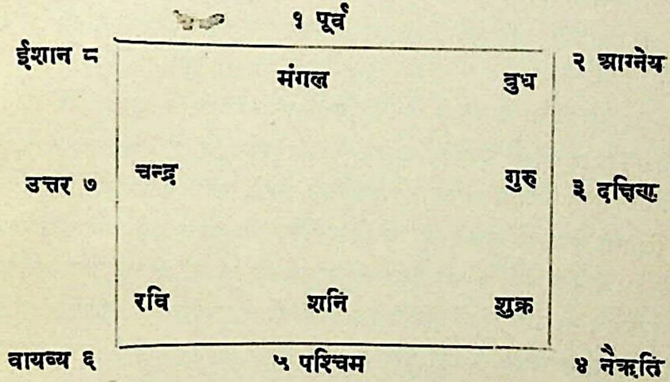

युद्धयात्रादि में वर्ज्य होरा (घण्टा)

वारारम्भाद् घटचः खाघ्न्यो माप्ताश्च वारपाद् होराः।
रविसितबुधेन्दुशनिगुरुभौमानामरिखगस्य सा वर्ज्या ।३०।

रवि आदि वार प्रवेश समय से जितनी इष्ट घटी पर होरा ज्ञान करना हो उस इष्ट घटी पल को २ से गुणा करके गुणनफल में ५ के भाग देने से लब्धि तुल्य गत होरा की संख्या होती है। वह वारेश से – रवि, शुक्र, बुध, चन्द्र, शनि, गुरु मङ्गल क्रम से गत होरेश समझना, उससे अग्रिम ग्रह वर्तमान होरेश होता है। अपनी राशि के स्वामी ग्रह के शत्रुग्रह की होरा को युद्धयात्रादि में त्याग देना चाहिये। ॥३०॥

उदाहरण—देवदत्त को मङ्गलवार में १२ घटी पर युद्ध के लिये यात्रा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का समय है। और मङ्गलवार का प्रवेश सूर्योदय के बाद १ घटी पर हुआ है तो वारप्रवेश समय से इष्ट समय तक की घटी ११ को २ से गुना करने से २२ इसमें ५ का भाग देने से लब्धि ४ तुल्य मङ्गल से उक्त क्रम की गणना से (मङ्गल-रवि-शुक्र-बुध इन) चार ग्रहों की होरा गत होकर वर्तमान चन्द्र की होरा हुई।

देवदत्त की राशि मीन का स्वामी गुरु है, उसका चन्द्र मित्र है अतः उस समय में यात्रा करने से विजय होगी।

देवदत्त की राशि के स्वामी (गुरु) के शत्रु बुध और शुक्र हैं अतः देवदत्त को बुध और शुक्र की होरा युद्धादि समय में त्याग देना चाहिये ॥३०॥

अपने-अपने स्थान में वार-प्रवेश समय जानने का प्रकार—

रेखादेश से अपने स्थान के देशान्तर-घटी पल को—पूर्वदेश में १५ घटी में घटाने और पश्चिम देश में जोड़ने से जो घटी पल हों, वह अपने वर्तमान दिनार्धकाल से जितना अधिक हो उतने ही अपने सूर्योदय से पूर्व, तथा दिनार्ध से जितना अल्प हो उतने ही अपने सूर्योदय के पश्चात् वार प्रवेश समझना। यदि १५ घटी में पूर्व, पश्चिम देशान्तर समय को घटाने, जोड़ने से अपने दिनार्ध के तुल्य हो तो ठीक अपने सूर्योदयकाल में ही वारप्रवेश भी समझना चाहिये। और वारप्रवेश समय से ही वार में कहे हुए शुभाशुभकार्य एवं दिशाशूल आदि का विचार करना चाहिये।

विशेष—आजकल भारतवर्ष में सर्वत्र रेलवे टाइम से समय का ज्ञान होता है। उस टाइम के अनुसार-प्रातः ६ बजकर २६ मिनिट पर सब स्थान में वारप्रवेश होता है। तदनुसार अपने स्थानीय दिनमानवश सूर्योदय घण्टा-मिनिट से वारप्रवेश का ज्ञान कर लेना चाहिये। जैसे—यदि अपने यहाँ ५ बजकर २० मिनिट में सूर्योदय हुआ तो (६।२६) –(५।२०) = १ घण्टा ६ मिनिट सूर्योदय के बाद वारप्रवेश समझना। एवं यदि स्थानीय सूर्योदय ७ बजकर ४ मिनिट पर हुआ हो तो (७।४)—(६।२६) = ०।३८ मिनिट उदय से पूर्व ही वारप्रवेश समझना।

वारप्रवेश से १ होरा (घण्टा) वारेश की कालहोरा होती है, फिर द्वितीय होरा रवि-चन्द्र आदि गणना से वारेश से छठे ग्रह की, फिर तृतीय उससे छठे की, एवं आगे की सब होरेश का ज्ञान करना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भारतमें स्टैंडर्ड घड़ी के अनुसार ६ बजकर २६ मिनट पर ही सर्वत्र वार प्रवेश हो जाता है। वार प्रवृति समयसे आरम्भ कर एक-एक घंटा (२॥ घड़ी) का एक-एक चाणवार अर्थात् १ स्थूलवार में २४ सूक्ष्मवार बीतते हैं। महर्षियोंने सूक्ष्मवार को ही प्रधान कहा है— यस्य ग्रहस्य वारे यत् कर्म किञ्चित् प्रकीर्तितम्। तत् तस्य काल होरायां सर्वमेव विचिन्तयेत् ॥

चणवारारम्भ-ज्ञानार्थ चक्र (होरेश चक्र)

		१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४ तक
घं.	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	०	१	२	३	४	५	६
मि.	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६
रविवार		शु	बु	चं	श.	गु.	मं	र.	शु.	बु	चं	श	गु	मं.	र	शु	बु.	चं.	श	गु	मं	र	शु	बु.	चं
चन्द्रवार		श.	गु.	मं.	र.	शु	बु	चं.	श	गु.	मं.	र.	शु.	बु	चं	श	गु	मं	र.	शु	बु.	चं	श	गु	मं
मङ्गलवार		र.	शु	बु.	चं	श	गु	मं.	र.	शु	बु	चं	श	गु	मं	र	शु	बु.	चं	श.	गु	मं.	र.	शु	बु
बुधवार		चं	श	गु.	मं.	र	शु	बु.	चं	श.	गु	मं	र	शु.	बु	चं	श.	गु	मं	र	शु	बु	चं	श	गु
गुरुवार		मं.	र.	शु.	बु	चं.	श	गु	मं	र	शु.	बु	चं.	श.	गु.	मं.	र	शु.	बु	चं.	श.	गु	मं	र.	शु
शुक्रवार		बु.	चं.	श.	गु.	मं	र.	शु.	बु	चं.	श.	गु.	मं	र.	शु	बु	चं	श	गु	मं	र	शु	बु.	चं.	श
शनिवार		गु.	मं.	र.	शु.	बु	चं.	श.	गु.	मं	र.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं	र.	शु	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अशुभ यामार्धादि में घात के स्थान

वामांसेऽत्र विरुद्धयामदलजः प्राग्भागके गूढजो
राहोः स्यात्तु कुचाधरे श्रुतिशिरोहस्ते प्रहारो रवेः।
चन्द्रादास्यभुजद्वये प्रहरणं शत्रुग्रहस्यापि तु
स्याद् घातः किल होरया हृदि मुखे खड्गादियुद्धे ध्रुवम् ॥३१॥

युद्ध समय में यदि विरुद्ध (अशुभ) यामार्धं हो तो शरीर के वामस्कन्ध पर, गूढ़ (केतु) यामार्धं हो तो शरीर के पूर्वभाग (नाभी से ऊपर मस्तक पर्यन्त), राहु यामार्धं हो तो स्तन के नीचे, रवि विरुद्ध हो तो कान-मस्तक और हाथों पर, चन्द्र अशुभ हो तो मुख और हाथों पर, यदि शत्रु ग्रह की होरा हो तो हृदय और मुख पर अस्त्र (तलवार आदि) का आघात समझना ॥ ३१ ॥

ग्रहों की स्थिति से आघात के स्थान

लग्नाद्राशेश्च पुंसः करिपुकपिनयाधोदभामातसंस्थाः
खेटा हन्युर्नवापि द्विषमथ सहसा मूर्ध्नि वक्त्रे सहृत्के।
वक्षोजे चोरुदेशे गुद इति तदनु ग्रन्थिदोर्गण्डभागे
वास्तुः सूनुः स कालः खलसमनिशगः कर्णकण्ठे शये च ॥३२॥

योद्धा को अपनी जन्मलग्न या जन्मराशि से सूर्य आदि केतु पर्यन्त नव-ग्रह यदि क्रम से १, १२, ११, १०, ९, ८, ४, ५, ६ इन स्थानों में हों तो क्रम से शत्रु के मस्तक, मुख, मुखहृदय, स्तन, ऊरू (जाँघ), गुदास्थान, ग्रन्थि (गाँठ), भुजा, गाल इन स्थानों में आघात (शस्त्र का प्रहार) करता है।

एवं वास्तु (मुख्य गृहारम्भ) का स्वामी, सूनु (ज्येष्ठपुत्र) का स्वामी, काल (जन्मलग्न से मृत्युभाव) का स्वामी ये तीनों यदि क्रम से युद्धकालिक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लग्न से २, ३ और ७ वें में हो तो क्रम से कान, कण्ठ और भुजा में आघात करता है ॥ ३२ ॥

विवरण—योद्धा के अपनी जन्मराशि या जन्मलग्न से युद्ध समय के लग्न और राशि में एक ही हो और उसमें सूर्य हो तो शत्रु के मस्तक पर, १२ वें स्थान में चन्द्रमा हो तो मुखपर, ११ वें स्थान में मङ्गल हो तो मुख और हृदयपर, १० वें स्थान में बुध हो तो स्तन पर, ९ वें स्थान में बृहस्पति हो तो जाँघपर, ८ वें स्थान में शुक्र हो तो गुदमार्गपर, ४ थे स्थान में शनि हो तो ग्रन्थिपर, ५ वें स्थान में राहु हो तो भुजापर और छठे स्थान में केतु हो तो गालपर आघात करता है।

एवं अपने विद्यमान मुख्य घर के आरम्भ लग्न या राशि का स्वामी युद्धकालिक लग्न या राशि से २ सरे स्थान में हो तो कान पर, तथा ज्येष्ठपुत्र की जन्मलग्न या राशि का स्वामी युद्धकालिक लग्न या राशि से ३ सरे स्थान में हो तो कण्ठ पर, एवं अपने जन्मलग्न से अष्टमेश यदि युद्धकालिक लग्न से ७ वें स्थान में हो तो शत्रु के भुजा पर आघात करता है।

इस प्रकार शत्रु के आघात स्थान-समझकर यदि उसी स्थान पर अस्त्र प्रहार किया जाय तो योद्धा की विजय होती है।

स्पष्टार्थ चक्र—

रवि	चन्द्र	मङ्ग	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
१	१२	११	१०	९	८	४	५	६
मस्तक	मुख	मुखहृदय	स्तन	जाँघ	गुदा	ग्रन्थि	भुजा	गाल

सर्पाकार त्रिनाड़ी चक्र में त्याज्य नक्षत्र

आर्द्रादिभिस्त्रिनाड्यामहिचक्रे यद्येकनाड्यां स्युः ।
नामार्कचन्द्रभानि प्रधने तदहस्त्यजेद्यत्नात् ॥ ३३ ॥

सर्पाकार त्रिनाड़ी चक्र में जिस दिन एक नक्षत्र (तीनों) एक नाड़ी में पड़े उस दिन युद्ध यात्रादि का त्याग कर देना चाहिये ॥ ३३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सर्पाकार त्रिनाड़ी चक्र—

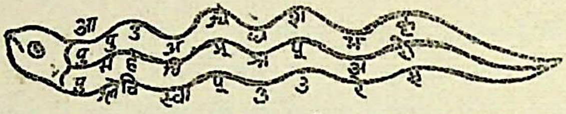

उदाहरण—जैसे केशव को युद्ध करना है तो उसका नाम नक्षत्र पुनर्वसु हुआ, वह त्रिनाड़ी चक्र की द्वितीय नाड़ी में है अतः यदि चन्द्रमा मघा में और सूर्य विशाखा में हो तो उस दिन युद्ध नहीं करना।

पूर्वादिदिशाओं में वारशूल

शनिचन्द्रौ गुरुः सूर्यसितौ कुजबुधौ त्यजेत्।
चतुर्दिक्षु निषिद्धार्धयामे शूलं विशेषतः ॥३४॥

पूर्व दिशा में शनि और सोमवार, दक्षिण दिशा में गुरुवार, पश्चिम दिशा में रवि और शुक्रवार, उत्तर दिशा में मङ्गल और बुधवार को वारशूल होता है, इनमें युद्ध यात्रा का त्याग करना चाहिये। एवं पूर्व जो रवि आदि वार में अर्धयाम दोष कहा गया है, उस समय में तो विशेषकर त्याग देना ॥ ३४ ॥

शूल ज्ञानार्थ चक्र—

दिशा	पूर्व		दक्षिण	पश्चिम		उत्तर	
वार	शनि	सोम	गुरु	रवि	शुक्र	मङ्गल	बुध
अर्धयाम	६	७	८	४	३	२	५

उदाहरण—जैसे सोमवार को पूर्वदिशा में शूल होने के कारण त्याज्य है, किन्तु सप्तम अर्धयाम में तो विशेष कर (अवश्य) त्याग देना चाहिये। ऐसे चक्र द्वारा सब दिशाओं में शूल का ज्ञान करना।

सूर्यादि ग्रह जितने समय में एक नक्षत्र का भोग करते हैं, उस पूर्ण समय में उसी नक्षत्र से प्रारम्भ करके क्रम से २७

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नक्षत्र के तुल्य-तुल्य अन्तर्भोग काल होते हैं, जो सूक्ष्मनक्षत्र (या अन्तर्नक्षत्र) माने जाते हैं।

कौन ग्रह किस अन्तर्भोग (सूक्ष्म) नक्षत्र में है? इसको जानने का प्रकार—

धीघ्ना भभुक्तनाड्यो नखाप्तिपरिशेषयोर्गतः सदपि ।
तत्काले शशिभमिति ख्याद्या गतिनुतिलवस्तु घटिकेह ॥३५॥

ग्रह की भभुक्त (भयात) घटी-पल को ६ से गुना करके गुणनफल में २० के भाग देने से लब्धि तुल्य उसी नक्षत्र से गिनकर गत नक्षत्र समझना एवं उसके अगले नक्षत्र को वर्तमान नक्षत्र समझना चाहिये ॥ ३५ ॥

विशेष—किसी एक नक्षत्र में कोई ग्रह जितने समय तक रहता है, वह समय भभोग कहलाता है। और नक्षत्र में ग्रह के प्रवेश समय से अपने इष्ट समय तक-काल भयात (भभुक्त) कहलाता है। भभोग समय का ६० वाँ भाग १ घटी होती है, उस घटी के हिसाब से जितनी भभुक्त (भयात) घटी हो उस पर से उक्त विधि से तत्तद्ग्रह के अन्तर्भोग नक्षत्र का ज्ञान करना चाहिये।

भभुक्त घटी जानने का प्रकार

"षष्टिघ्नो भगतः कालो भभोगसमयोद्धृतः ।
लब्धं भभुक्तं घट्याद्यं ततो ज्ञेयं सुसूक्ष्मभम् ॥"

भयात समय को ६० से गुना करके गुणनफल में भभोग समय के भाग देने से लब्धि तुल्य भभुक्त घटी संख्या होती है। इस प्रकार चन्द्रमा का भभोग समय में घट्यादि (घटी, पल) और अन्य ग्रहों के भभोग समय में दिनादि (दिन,घटी,पल) अवयव होते हैं। भाग देने की क्रिया में भभुक्त और भभोग दोनों को एक जातीय (पलमय) बना लेना चाहिये।

उदाहरण—जैसे पुष्य नक्षत्र में चन्द्रमा का भयात समय घट्यादि १५।५, भभोग समय ६०।४५ गुना भाग क्रिया के लिये पलमय भयात= ९०५, इसको ६० से गुना करने से ५४३०० इसमें पलमय भभोग ३६४५ के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भाग देने से लब्धि भभुक्त घट्यादि १४।५४, इसको ६ से गुना करने से १३४।६ इसमें २० के भाग देने से लब्धि गत अन्तर्भोग नक्षत्र संख्या ६, अतः पुष्य से ६ ठां हस्त गत और चित्रा वर्तमान अन्तर्भोग (सूक्ष्म) नक्षत्र हुआ। अतः चन्द्रमा का वर्तमान चित्रा नक्षत्र हुआ।

एवं सूर्य के अन्तर्भोग (वर्तमान सूक्ष्म नक्षत्र) जानने के लिए—सूर्य के यदि हस्त नक्षत्र में दिनादि भयात समय ७।१५।१४ और भभोग समय दिनादि १३।१५।२५ है तो भयात को एकजातीय (पलमय) बनाने से १५३१४ इसको ६० से गुना करने से ९१८८४० इसमें पलमय भभोग ४७७२५ के भाग देने से लब्धि सूर्य भभुक्तघटीपल संख्या १९।१५ इसको ९ से गुना करने से १७३।१५ इसमें २० का भाग देने से लब्धि गत अन्तर्भोग नक्षत्र संख्या ८ अतः हस्त से आठवाँ पूर्वाषाढ़ गत और उत्तराषाढ़ वर्त्तमान (सूक्ष्म) नक्षत्र हुआ।

इसी प्रकार मङ्गलादि ग्रह का भी भयात, भभोग समय द्वारा अन्तर्भोग (सूक्ष्म) नक्षत्र का ज्ञान करना चाहिए।

राहुकालानल चक्र

पक्षो जीवो वलितगतिना राहुणोतोडुलोका
गम्योऽस्तस्तद्युतमुडुशयं कर्तरीग्रस्तसंज्ञे।
स्थायीनो याय्युडुपनिरिमौ जावगौ तज्जयाय
प्रेताज्जग्धकिमपि तु वरं कर्त्तरी जग्धतश्च॥ ३६॥

वक्रगति (राहु) के भुक्त १३ नक्षत्र जीवपक्ष संज्ञक और गम्य (अभुक्त) १३ नक्षत्र अस्त (मृत) संज्ञक हैं। राहु से युक्त नक्षत्र कर्तरीनामक और राहु से पन्द्रहवाँ नक्षत्र ग्रस्त संज्ञक कहलाता है। सूर्य स्थायी ग्रह और चन्द्रमा यायी ग्रह है। यदि सूर्य जीवपक्ष संज्ञक में हो तो उस समय में स्थायी की विजय और यदि चंद्रमा जीवपक्ष नक्षत्र में हो तो यायी की विजय होती है। मृतपक्ष नक्षत्र से ग्रस्त नक्षत्र कुछ श्रेष्ठ होता है और ग्रस्त से कर्तरी नक्षत्र कुछ श्रेष्ठ होता है॥३६॥

विशेष—इससे यह भी स्पष्ट है कि सूर्य मृतपक्ष में हो तो स्थायी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

की और चंद्रमा मृतपक्ष में हो तो यायी की पराजय होती है। इस प्रकार यदि चन्द्रमा कर्तरी में और सूर्य ग्रस्त में हो तो यायी की विजय, विपरीत हो तो स्थायी की विजय समझनी चाहिए। यदि रवि और चंद्रमा दोनों जीवपक्ष में हो तो यायी और स्थायी में मैत्रीपूर्ण सन्धि होती है। यदि सूर्य और चंद्रमा दोनों मृतपक्ष में हो तो दोनों की समान क्षति होकर शत्रुता बनी ही रहती है। एवं रवि श्रेष्ठ नक्षत्र में हो तो स्थायी की और चंद्र श्रेष्ठ नक्षत्र में हो तो यायी की विजय होती है।

उदाहरण—मान लीजिए कि—राहु हस्तनक्षत्र में है तो इसके भुक्त (वक्रगति होने के कारण) चित्रा, स्वा, वि, अनु, ज्ये, मू, पूषा, उषा, अभि, श्र, ध, श, पूभा ये १३ नक्षत्र जीवपक्ष और—उफा, पूफा, म, श्ले, पु, पु, आ, मृ, रो, कृ, भ, अ, रेवती ये १३ नक्षत्र मृतपक्ष तथा हस्त कर्तरी और उत्तरभाद्रपद ग्रस्त संज्ञक है। इनमें सूर्य और चन्द्रमा की तात्कालिक स्थिति देखकर शेष उदाहरण स्पष्ट है ॥३६॥ यहाँ अभिजित सहित २८ नक्षत्र जानना।

नाम के आदि अक्षर से नक्षत्रज्ञानार्थ—

अवकहडा चक्र

शुगठीकोष्ठेषु तिर्यक् त्ववकहडलिखाधः स्थितालीष्विदाद्यै-
स्तान्युक्तैस्तैः स्वरैश्च क्रमत इह कुयुग्घं ङछौ मध्यकोष्ठे।
घेघैंरूर्ध्वाधरालीष्वनलभत इहासार्पमर्गौर्भपादा
एवं चान्येषु दद्यान्मटपरतपुयुक्षणठा मध्यकोष्ठे ॥३७॥
पितृभत इति भानि चाद्विदेवं
नयभजखाश्च तथा भुयुग्धफौढः।
हरिभमवधिरत्रमैत्रतः स्यु-
र्गसदचला वसुभाद्दुयुक्थझाञः ॥३८॥

वर्गाकार २५ कोष्ठों के चक्र में ऊपरवाले ५ तिर्यक् कोष्ठों में क्रम से—अ, व, क, ह, ड, लिखना; फिर 'अ' कार के नीचे ऊर्ध्वाकार ४ कोष्ठों में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

क्रम से इ, उ, ए और ओ इन चारों वर्णों को लिखकर इन्हीं चार स्वरों से युक्त करके व, क, ह, ड, इन चारों वर्णों को अपने अपने से नीचे के ५ कोष्ठों में स्थापित करना, इस प्रकार मध्य के कोष्ठों में 'कु' वर्ण के साथ घ–ङ–छ इन तीन वर्णों के लिखने से (२५) पचीसों कोष्ठक में २८ अक्षर होते हैं, उनमें ४, ४ अक्षर क्रम से कृत्तिका से आश्लेषा पर्यन्त ७ नक्षत्रों के ४, ४ चरण होते हैं। इसी प्रकार प्रथम २५ कोष्ठों के चक्र में मिलाकर दूसरा २५ कोष्ठ का चक्र लिखें उसमें ऊपर के तिर्यक् पंक्ति में —म, ट, प, र, त, ये अक्षर लिखकर इन पाँचों के अपने अपने नीचे (ऊर्ध्वाकार) ४ कोष्ठों में 'इ' कारादि ४ स्वरों से युक्त करके लिखें एवं मध्य में 'पु' अक्षर के साथ ष–ण–ठ इन तीन अक्षरों को लिखें, इस प्रकार दूसरे वर्ग कोष्ठ चक्र में २८ अक्षर होते हैं, जिनमें ४, ४ अक्षर मघा से विशाखा तक ७ नक्षत्रों के ४, ४ चरण समझे जाते हैं। पुनः प्रथम वर्ग (२५) कोष्ठ चक्र के नीचे तृतीय २५ कोष्ठ के चक्र को लिखकर उसमें ऊपर की पंक्तिस्थ ५ कोष्ठों में तिर्यक् क्रम से—न, य, भ, ज, ख, इन अक्षरों को लिखकर अपने अपने नीचे (ऊर्ध्वाकार) कोष्ठों में 'इ' कारादि ४ स्वरों से युक्त करके पाँचों वर्ण को लिखें, मध्य कोष्ठ में 'भु' अक्षर के साथ ध–फ–ढ इन तीन वर्णों के लिखने से २८ अक्षर होते हैं, उनमें ४, ४ अक्षर क्रम से अनुराधादि ७ नक्षत्रों के ४, ४ चरण के वर्ण होते हैं। एवं पुनः २५ कोष्ठों का चतुर्थ वर्गचक्र—द्वितीय वर्ग कोष्ठ के नीचे तृतीय वर्गकोष्ठ में मिलाकर लिखना, उसमें प्रथम ऊपर के ५ कोष्ठों में तिर्यक् क्रम से ग–स–द–च–ल इन पाँच वर्णों को लिखकर अपने अपने नीचे ऊर्ध्वाकार— ४, ४, कोष्ठों में 'इ' कारादि स्वरों से युक्त करके पाँचों वर्ण को लिखें, मध्य के कोष्ठ में 'दू' अक्षर के साथ थ–झ–ञ लिखने से २८ वर्ण क्रम से धनिष्ठादि भरणी पर्यन्त ७ नक्षत्रों के ४, ४ वर्ण ४, ४ चरण होते हैं ॥३७—३८॥

विशेष—इस प्रकार ४ वर्ग चक्र मिलकर १०० कोष्ठ का चक्र 'शतपद' चक्र कहलाता है। इसी को लोग 'अ–व–क–ह–डा' चक्र (गँवार भाषा में—'होडा' चक्र) भी कहते हैं। स्पष्टार्थ चक्र नीचे दिया गया है। इसके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वारा अश्विनी आदि नक्षत्रों का चरण ज्ञान सहज ही हो सकता है। जैसे—चु. चे. चो. ला=अश्विनी, ली. लु. ले. लो=भरणी, अ--इ--उ--ए= कृत्तिका, ओ--वा--वी--वू=रोहिणी इत्यादि।

अवकहडाचक्र—

अ	अ १	व २	क ३	ह ३	ड ४ पु.	म १	ट २	प ३	र ३	त ४.स्वा
इ	इ २	वि ३	कि ४ मृ	हि ४ पु.	डि १	मि २	टि ३	पि ४. उ	रि ४. चि	ति १
उ	उ ३	वु ४ रो	कु. घ ङ. छ १-४आ	हु १	डु २	मु ३	टु ४. पू.	पू ष ण. ठ १-४ह	रू १	तु २
ए	ए ४ कृ	वे १	के १	हे २	डे ३	मे ४. म	टे १	पे १	रे २	ते ३
ओ	ओ १	वो २	को २	हो ३	डो ४ श्ले.	मो १	टो २	पो २	रो ३	तो ४ वि

अ	न १	य २	भ ३	ज ३	ख ४ऽभि	ग १	स २	द ३	च ३	ल ४अश्वि
इ	नि २	यि ३	भि ४ मू	जि ४ उ	खि १	गि २	सि ३	दि ४.पू.	चि ४.रे.	लि १
उ	नु ३	यु ४.ज्ये	भु. ध फ. ढ १-४.पू	जु १	खु २	गु ३	सु ४.श.	दू.थ झ ञ १-४उ.	चु १	लु २
ए	ने ४ ऽनु	ये १	भे १	जे २	खे ३	गे ४.ध.	से १	दे १	चे २	ले ३
ओ	नो १	यो २	भो २	जो ३	खो ४.श्र	गो १	सो २	दो २	चो ३	लो ४.भ.

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हंसचारकथनपूर्वक-स्वरबल

नागैर्नीचैर्निभिज्ञाश्रयनशुकमितैः श्वासपर्य्यायकैर्वा
त्यभ्रं वातोऽनलोम्बुक्षितिरपृथगुपर्यन्तराधोप्यनृजुत्वे ।
व्यत्यासाच्चाव गीतो हृदयकमलजे पत्र एकत्रतेन
श्वासा नानाविसंख्याननरसकमलेऽहर्न्निशोस्त्रिभ्रमोऽत्र।।३९।।

हृदय कमल में जो अष्टदल (८ पत्र) होते हैं— उनमें प्रत्येक में दो-दो भाग होते हैं। उन पत्रों में पूर्व के पत्र के पूर्वार्धं में मूल के ऊपर की ओर क्रम से ३० श्वास (नासिका मार्ग से) पर्यन्त आकाश तत्व, उसके बाद ६० श्वास पर्यन्त वायुतत्व, उसके बाद ९० श्वास तक अग्नि तत्त्व, उसके बाद १२० श्वास पर्यन्त जलतत्व और उसके बाद १५० श्वास पर्यन्त पृथ्वी तत्त्व चलता है। पुन: प्रथम दल के द्वितीय भाग में विपरीत क्रम (नीचे की ओर) से १५० श्वास पर्यन्त पृथ्वी, उसके बाद १२० पर्यन्त जल, उसके बाद ९० तक अग्नि, उसके बाद ६० तक वायु, उसके बाद ३० श्वास पर्यन्त आकाश तत्त्व चलता है।

इस रिति से एक ही पत्र में ऊर्ध्व क्रम से ४५० श्वास में पुनः अधः क्रम से ४५० श्वास में आकाशादि और पृथिव्यादि तत्त्वों के उदय होते हैं। एवं एक पत्र में ९०० श्वास, अतः ८ पत्रों में ७२०० श्वास (१२०० पल = २० घटी) समय बीतते हैं। इस प्रकार अहोरात्र में तीन आवृत्ति से २१६०० श्वास (३६०० पल = ६० घटी) समय बीतते हैं। अत: अपने अपने स्थानीय सूर्योदय से श्वास की गणना समझनी चाहिये ॥३९॥ उदाहरण चक्र से स्पष्ट है।

ग्रन्थान्तरे—टिप्पणी—

पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाश मेव च। मध्ये पृथ्वी अधश्चाप ऊर्ध्व वहति चानलः ॥ तिर्यग्वायुप्रवाहश्च नभोवहति संक्रमे ॥ १ ॥ वामे वा दक्षिणे वापि वराष्टांगुलदीर्घिका, षोडशांगुलमापः स्युस्तेजश्च चतुरंगुलम् ॥२॥ द्वादशांगुलदीर्घः स्याद्वायुर्व्योमांगुलेन हि ॥३॥ पृथ्वी पीता सितं वारि रक्तवर्णो धनंजयः। मारुतो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नीलजीमूत आकाशो वर्णपञ्चकः ॥ ४ ॥ पृथिव्यादित्रितत्त्वेन दिनमासाब्दकैः फलम् । शोभनं च तथा दुष्टं व्योममारुतवह्निभिः ॥५॥ पृथ्वी जले शुभे तत्त्वे तेजो मिश्रफलोदयम् । हानिमृत्युकरौ पुंसामुभौ हि व्योममारुतौ ॥६॥ पार्थिवे सततं युद्धं सन्धिर्भवति वारुणे । विजयो वह्नितत्त्वेन वायौ भङ्गौ मृतिस्तुखे ॥७॥ हंसचारस्वरूपेण येन ज्ञानं त्रिकालजम् । पञ्चतत्त्वेषु भेदोऽयं कथितः पूर्व सूरिभिः ॥८॥ अर्थ स्पष्ट है ।

अष्टदल अन्तर हृदयकमलचक्र—

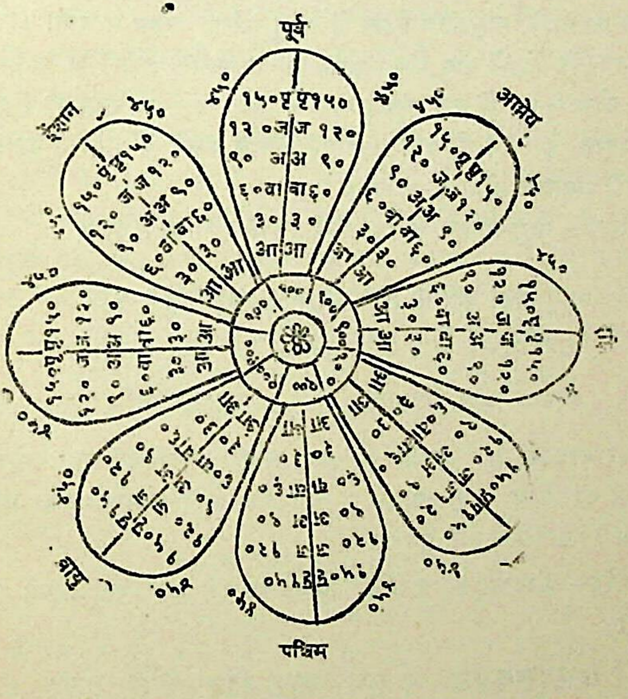

पूर्वादि पत्र में श्वास चलते समय में चित्तवृत्ति

इन्द्रादिदिग्दलचरे श्वसने रणाय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भोक्तुं रुषेऽथ विषयाय मुदे गमाय ।
चेतोभवेत् कृपयितुं च नृपास्पदाय
पत्रद्वयान्तरचरे तु मुदे परस्मै ॥४०॥

पूर्व पत्र में वायु संचार समय में उत्साह, युद्धादि में प्रवृत्त होने की मनोवृत्ति होती है। अग्निकोण के पत्र में वायु संचार समय में भोजनार्थ, दक्षिण पत्र में वायु संचार समय में क्रोध का उदय, नैऋत्य कोण में वायु संचार समय में विषय सुख भोग की इच्छा, पश्चिम पत्र पर चलता हो तो आनन्द का उदय, वायुकोण के पत्र में वायु संचार समय में यात्रा की मनोवृत्ति, उत्तर के पत्र में वायु संचार समय में अनुकम्पा (कृपा) का उदय और ईशान कोण के पत्र में वायु संचार काल में राज्यादि स्थान प्राप्ति की इच्छा का उदय रहता है। एवं दो पत्रों के सन्धि में वायु चलने के समय में परमानन्द प्राप्ति की मनोवृत्ति होती है ॥ ४० ॥

विशेष—वायु साधन का ज्ञान सिद्धगुरु के द्वारा ही होता है।

पृथिवी आदि तत्त्व बहने के शुभाशुभ फल

धराम्बुनी शुभे महो विमिश्रितं फलं भवेत् ।
मरुन्नभश्च दुःखदे मते स्वरार्थवेदिभिः ॥४१॥

स्वर शास्त्रज्ञों का मत है कि पृथ्वी और जलतत्त्व का समय शुभप्रद, अग्नितत्त्व का मिश्र (शुभ-अशुभ) तथा वायु और आकाश तत्त्व कष्टप्रद (अशुभ) फलदायक होते हैं ॥४१॥

विशेष—शुभप्रद समय में ही विवाह-यात्रादि कार्य का प्रारम्भ करना चाहिए।

अष्टदलकमल में सूर्य चन्द्र वहन और प्राण वायु सञ्चार के घट्यादि ज्ञान

द्वे द्वे पत्रे इनेन्दू वहत इह तयोः पञ्च पञ्चेति घट्यो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाको गुर्वन्त्वराक्त्याऽसुरथ च नतलासुर्घटी कथ्यतेत्र ।
शुक्लादित्रित्रिघस्त्रैर्हिमगुरथ रविः प्रत्युषश्चेत् प्रवृत्तः
श्रेयःस्यादेकनाड्यां यदि वहति शिखो पञ्चघस्त्रैर्मृतिःस्यात्॥४२॥

हृदयकमल के दो-दो पत्रों पर सूर्य और चन्द्रमा ५, ५ घटी चलते हैं। अर्थात् सूर्य (दक्षिण) नाड़ी के एक-एक पत्र पर अढ़ाई-अढ़ाई घटी चलने से ५ घटी होते हैं। एवं चन्द्र (वाम) नाड़ी के एक-एक पत्र पर अढ़ाई-अढ़ाई घटी चलने से ५ घटी होते हैं। पुनः इसी प्रकार-५ घटी में दो पत्र पर सूर्य और ५ घटी में दो पत्र पर चन्द्रमा चलता है। इस प्रकार २० घटी में सूर्य और चन्द्रमा अष्ट पत्रों में भ्रमण कर लेते हैं अतः अहोरात्र में तीन वार भ्रमण होता रहता है।

घटी का मान इस प्रकार समझना—यथा १० गुरु अक्षर के उच्चारण में जितना समय लगता है—वह १ प्राण, ३६० प्राण की १ घटी कहलाती है। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से ३ तिथियों में क्रम से चन्द्रमा प्रातःकाल से प्रारम्भ कर ५ घटी चन्द्र फिर ५ घटी सूर्य इस क्रम से अहोरात्र पूर्ण करते हैं। एवं कृष्णपक्ष में प्रतिपदा से ३ तिथियों में प्रातःकाल से सूर्य ५ घटी पुनः चन्द्रमा ५ घटी इस क्रम से चलकर अहोरात्र पूर्ण करते हैं। यदि अपने-अपने समय में सूर्य और चन्द्र चलते हों तो कल्याणकारक समझना। यदि ५ दिन तक अग्नितत्त्व का वहन हो तो मरण होता है॥ ४२ ॥

विशेष—यहाँ दिन (तिथि) शब्द से सावन दिन (सूर्योदय से) समझना, तिथि के आरम्भ से नहीं।

शुक्लपक्ष चन्द्रस्वर-ज्ञान चक्र—

शुक्ल	स्वर	चं	चं	चं	सू	सू	सू	चं	चं	चं	सू	सू	सू	चं	चं	चं
	तिथि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५

कृष्णपक्षर सूर्यस्व ज्ञानचक्र—

कृष्ण	स्वर	सू	सू	सू	चं	चं	चं	सू	सू	सू	चं	चं	चं	सू	सू	सू
	तिथि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	३०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

• *टिप्पणी*—यथोक्त स्वरोदये "आदौ चन्द्रस्सिते पक्षे भास्करस्तु सितेतरे। प्रतिपद्युदितोऽहानि त्रीणि-त्रीणि क्रमोदयः॥१॥ चन्द्रोदये यदा सूर्यश्चन्द्रः सूर्योदये यदा। अशुभं हानिरुद्वेगः शुभं सर्वं निजोदये॥२॥ शशाङ्कं चारयेद्रात्रौ दिवा-चार्यो दिवाकरः। इत्यभ्यसरतो नित्यं स योगी नात्र संशयः॥३॥ इति

युद्धादि आरम्भ में विशेषता

अर्केऽग्नितत्त्ववहने हरिहेलया य-
द्येकोऽपि हन्ति सुबहून् किमुतात्र चित्रम्।
शून्ये रिपून् स्वपृतनामपि वाहपक्षे
निक्षिप्य विक्षिपति लक्षमरीन् क्षणेन् ॥४३॥

सूर्य नाड़ी में अग्नितत्त्व वहन के समय में युद्ध-द्यूत-विवादादि आरम्भ करने से अकेला भी योद्धा सिंह के समान सैकड़ों शत्रुओं को पराजित कर देता है इसमें कोई सन्देह नहीं। एवं जो नाड़ी शून्य (नहीं चलती) हो उस तरफ शत्रुओं को और जिधर की नाडी (नास स्वर) चलता है उधर अपनी सेना को रखकर युद्ध करे तो क्षणभर-में अकेला भी लाखों शत्रुओं की सेना को नष्ट कर देता है॥४३॥

प्रश्न में विशेषता

प्रश्ने चन्द्रवहे तु वामगनरेणोक्ते जयो निश्चितं
सूर्ये दक्षगतेन कृच्छ्रविजयी शून्यस्थदूते क्षतिः।
सूर्ये चेद्विषमाक्षराणि शशिनि ब्रूते समानि ध्रुवं
जेतासौ पुरतोऽपि वामग इव स्यात् पृष्ठगो दक्षिणः ॥४४॥

युद्ध के लिये प्रश्न करने के समय में चन्द्र (वाम) नाडी चलती हो और पूछनेवाला वामभाग में होकर पूछे तो निश्चय विजय होती है। एवं सूर्य (दक्षिण) नाड़ी चलती हो और प्रश्नकर्त्ता दाहिने भाग में होकर पूछे तो बहुत परिश्रम के बाद विजय होती है। तथा जो नाडी नहीं चलती हो उस तरफ होकर-प्रश्न करे तो पराजय होती है, ऐसा समझना चाहिये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सूर्य (दक्षिण) नाडी चलते समय प्रश्न में विषम (३, ५ आदि) अक्षर हों तथा चन्द्रनाडी वहन समय में प्रश्न में सम (२, ४ आदि) अक्षर हों तो विजय होती है। यदि सम्मुख होकर पूछे तो उसे वाम भागवत् और-पृष्ठभाग होकर पूछे तो उसे दक्षिण भागवत् फल समझना चाहिये ॥४४॥

पुनः प्रश्न में विशेषता

प्रश्नः श्वासांतर्गमे चेज्जयः स्या-
न्द्भङ्गो निर्यात्यत्र सूक्ष्मं तदेतत्।
लाभः पुत्रादेश्च वाहस्थदूते
पृच्छत्युक्तः शून्यगे स्यादसिद्धि ॥४५॥

जिस समय अभ्यन्तर (भीतर) की तरफ श्वास जाता हो उस समय में प्रश्न करे तो विजय और जिस समय श्वास बाहर आता हो उस समय प्रश्न करे तो पराजय कहनी चाहिये। एवं पुत्र-स्त्री-धन आदि लाभ के लिये जिधर श्वास चलता हो उधर खड़ा होकर पूछे तो अवश्य लाभ कहना और जिधर श्वास बन्द हो उधर-होकर पूछे तो लाभ नहीं होगा, ऐसा कहना चाहिये ॥ ४५ ॥

सूर्य और चन्द्रनाडी वहन समय में कर्तव्यकार्य

चन्द्रे वहे नृपविलोकनगेहवेश—
पट्टाभिषेकमुखकर्मभवेच्छुभं यत्।
सौरे तु मज्जनवधूरतिभुक्तियुद्ध—
मुख्यं भवेदशुभकर्मफलाय सत्यम् ॥४६॥

जब चन्द्र (वाम) स्वर चलता हो उस समय में राजदर्शन, गृह-प्रवेश, राज्याभिषेक एवं विवाहादि समस्त शुभकर्म करने से सिद्धि होती है। जब सूर्य (दक्षिण) स्वर नाडी) चलती हो उस समय में स्नान, स्त्रीप्रसङ्ग, भोजन, युद्ध और शस्त्रादि निर्माण, मारण-मोहनादि अशुभकर्मों की सिद्धि होती है ॥४६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुरत में वशीकरण विधि

वहति शशिनि वाश्चेदङ्गनाया नरस्य
द्युमणिमनुकृशानुस्तत्र काले रतेषु ।
स्रवति मदनवारां निर्झरं साथ पुंसा
यदि शिखिनवनोताशक्तिवद्भाविता स्यात् ॥४७॥

जिस समय स्त्री का चन्द्र (वाम) श्वास और पुरुष का सूर्य (दक्षिण) श्वास चलता हो और उस काल में यदि स्त्री का जलतत्त्व और पुरुष का अग्नितत्त्व का भी उदय (पूर्वोक्त हंसचार कथन द्वारा अन्तर हृदयकमल चक्र से देखकर समझ लें) हो तो उस समय में रति (मैथुन = स्त्री-संभोग) करने से अग्नि के संयोग से घृत के समान वह (स्त्री) मदन विह्वला होकर पुरुष के साथ द्रवित होकर संतुष्ट हो जाती है ॥४७॥

पुनः वशीकरण में विशेषता

सुप्ताया निजवह्दुष्णारश्मिनाड्या
चन्द्रं चेद्वहनगतं पिबेत्तदानीम् ।
आमृत्योर्वशयति तामियं च कान्तं
चन्द्रेण द्युमणिवहं मुहुः पिबन्ती ॥४८॥

शय्या पर सोई हुई स्त्री का चन्द्र (वाम) श्वास वहता हो, उसको यदि अपने सूर्य (दक्षिण) श्वास के द्वारा पान करे तो वह पुरुष आमरण स्त्री को अपने वश में रख सकता है । इसी प्रकार स्त्री यदि अपने वामस्वर द्वारा पुरुष के दक्षिण गत श्वास का पान करे तो पुरुष को आमरण (मृत्युपर्यन्त) वश कर लेती है ॥४८॥

सुरत युद्ध बल

मोहनं मदनयुद्धमूचिरे तत् सुधीरणा इवात्र चेद्बलम् ।
प्रोक्तमेतदुपैतिमैथुनंद्रावयेत्तदबलां सुविह्वलाम् ॥४९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बुधजन सुरत को मदन युद्ध कहते हैं, इसलिये इसमें भी शत्रु के साथ युद्ध के समान ही स्वरादि बल देखना चाहिये। क्योंकि इसमें भी स्त्री से विजय पाने की इच्छा रहती है अतः पूर्वोक्त स्वर बलादि देखकर यदि सुरत (स्त्री संयोग) करे तो स्त्री को विह्वल बनाकर वश में ला सकता है ॥ ४९ ॥

द्यूत (जूआ) क्रीड़ा में विशेषता

स्वरच्छायानिलार्केन्दुयोगिनीराहुभूबलैः ।
अन्यैश्च द्यूतमाबध्नञ्जयत्येव धनं बहु ॥५०॥

पूर्व कथित-बाल-कुमारादि वर्णस्वर, सूर्यचन्द्रादि की छाया, वायु, सूर्य-चन्द्रनाडी (स्वर), योगिनी, राहु और भूबल एवं और जो बल कहे गये हैं उन सबों के अनुकूल देखकर द्यूतक्रीड़ा (जूआ खेलना) प्रारम्भ करे तो वह प्रतिद्वन्दी से बहुत धन जीत सकता है ॥ ५० ॥

औषधियों के भक्षण और धारण से विजयलक्षण

आस्ये तालजटाथकेतकिदलं शीर्षे च खार्जूरके
मूलेऽङ्कस्थ इषुर्लगेन्न सघृतैर्भुक्तैरजीर्णैश्च तैः ।
कंसायुत्तारमूलकानिरशनैः पुष्यार्क आत्ता धृता
जग्धा वा सह तन्दुलाम्बुभिरथा पाठा जटापीदृशी ५१

संग्राम के समय में योद्धा यदि-मुखमें ताल की जड़; मस्तक में केतकी के पात और कमर में खजूर की जड़ धारण करके संग्राम करे तो उसको शत्रु का शर (अस्त्र) नहीं लगता है। अथवा इन सबको पीसकर घृत में मिलाकर खावे तो जब तक वह उदर में रहता है तब तक उसको शत्रु के अस्त्र का आघात नहीं होता है। तथा काँसारी वृत्त के उत्तरभाग की जड़ को शनिवार के दिन स्नानादि उपवास करके पुष्यनक्षत्र युक्त रविवार को उखाड़कर धारण करे या पीसकर घृत के साथ खाय अथवा पाठा की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जड़ को इसी प्रकार रविवार में लाकर धारण क थारे चावल के पानी के साथ पीसकर खाये तो भी शत्रु के अस्त्र से शरीर पर आघात नहीं होता है ॥५१॥

अंकोला लक्ष्मणा पुंखा सर्पाक्षी शिखिचूलिका ।
विष्णुक्रान्ता काकजङ्घा नीली देवी च पाटला ॥५१॥
भुजास्यमूर्धगा भुक्ता तज्जटैकापि वारयेत् ।
रणोदारुणशस्त्रौघं यावज्जीर्यति नोदरे ॥५३॥

अंकोला (अकोहर), लक्ष्मणा श्वेत कटेली), शरपुंखा, सर्पाक्षी, मयूरशिखा, विष्णुक्रान्ता, काकजङ्घा, नीली; सहदेवी और पाटली इन औषधियों को बाहु, मुख और मस्तक पर धारण करके अथवा इनमें से किसी भी एक की जड़ को (पूर्वोक्तविधि से) खालेवे तो जब तक औषधी उदर में रहती है तब तक संग्राम में दारुण शस्त्रों के समूह को निवारण करती है ॥५२॥

विजय साधन

स्वर्णाभा सिंहकाकिण्यां सिंहीघृष्टः सतज्जटः ।
अन्तस्थः पारदः सिक्थमुद्रो जयद आस्यगः ।५४।

सोने के रङ्ग के समान (पीतवर्ण) सिंहीनाम की कौड़ी में जड़ सहित कटेली के रस के साथ पारद (पारा) को घिसकर भरलेवे और गुटिका बनाकर संग्राम के समय में मुख में रख लेवे तो विजय होती है ॥४४॥

चक्रमर्दकगोजिह्वाशिखिचूडाजटास्वपि ।
एकैका वादजयदा पुष्यार्कात्तास्यमूर्द्धगा ॥५५॥

जिस रविवार को पुष्यनक्षत्र हो उस दिन चकवन्द (पँवाड), गोजिह्वा (गोभी) और मयूरशिखा-इनमें से किसी एक की जड़ लाकर रखे और उसको मस्तक पर धारण करके संग्राम करे तो निश्चय विजय होती है ॥५५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जयपराजय ज्ञानार्थ कोटचक्र

भान्याणि प्रलिखेदुपर्युपरि च त्रीणीशदिश्यग्निभाद्-
बाह्यात् त्रीणि लिखांतराच्छिवभतोप्यैन्द्रयां च सार्पं बहिः ।
आग्नेयान्निति पितृतो यमदिशि न्यस्यन्बहिःसप्तमं
मैत्राद्वासवतोऽन्ययोःखयबहिर्हि मध्यमेन्तश्चदम् ॥५६॥

एक ४ रेखाओं से (वर्गाकार) चतुष्कोण क्षेत्र लिखकर उसके ऊपर-दूसरा चतुष्कोण, पुनः उसके ऊपर भी तीसरा चतुष्कोण (चतुर्भुज) क्षेत्र लिखना (इसप्रकार-कोटचक्र बन जाता है)। इस चक्र के बाहर वाले चतुर्भुज के ईशान कोण से प्रारम्भ करके कृत्तिकादि ३ नक्षत्र अधोधः (कृ-रो-मृ) तीनों चतुर्भुज के कोण में लिखें, तथा आ. पु. पुष्य इन ३ नक्षत्रों को ऊर्ध्वोर्ध्व क्रम से पूर्व दिशा में तीनों चक्र के बीच में लिखें और-७ वाँ नक्षत्र (आश्लेषा) को पूर्वदिशा में ही चक्र के बाहर लिखें। पुनः बाहर से भीतर के क्रम से अग्निकोण में (म. पूफा. उफा) तीन नक्षत्र, दक्षिणदिशा में भीतर से ऊर्ध्व क्रम से (ह चि. स्वा) तीन नक्षत्र तथा विशाखा को दक्षिण में ही बाहर लिखें, फिर नैऋत्यकोण में बाहर से भीतर क्रम से (अनु. ज्ये. मू) तीन नक्षत्र, और भीतर-बाहर क्रम से (पूषा. उषा. अभि) तीन नक्षत्र पश्चिम-दिशा में और श्रवण को पश्चिम में ही चक्र के बाहर लिखें। पुनः वायव्य-कोण में (ध. श. पूभा) बाहर से भीतर क्रम से तीन नक्षत्र लिखकर फिर उत्तरदिशा में भीतर से बाहर क्रम से (उभा. रे. अश्वि) इन तीन नक्षत्रों को तथा भरणी को उत्तरदिशा में ही चक्र के बाहर लिखें। इस प्रकार नक्षत्र न्यास करने से बाहर के १२, मध्य के ८ और भीतर के ८ नक्षत्र माने जाते हैं ॥ ५६ ॥

कोणभानि प्रवेशे स्युर्द्वादशान्यानि निर्गमे ।
षष्ठषष्ठं सप्तकेषु मध्ये स्तम्भचतुष्टयम् ॥५७॥

ईशानादि चारों कोण के जो १२ नक्षत्र हैं—वे प्रवेश के और पूर्वादि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिशाओं के जो १२ नक्षत्र हैं-वे निर्गम के नक्षत्र हैं। आरम्भ से प्रत्येक सात-सात नक्षत्रों में जो छठे छठे ४ नक्षत्र हैं–वे चारों दिशाओं में स्तम्भरूप हैं ५७

उपलक्षणमेव कृत्तिकादौ प्रथमं दुर्गभमेव वैरिभं वा ।
ग्रहचक्रमुडुस्थमालिखेद्वै चतुरस्रं वरणं च मध्यमं स्यात् ॥५८॥

यहाँ कृत्तिकादि से नक्षत्र की गणना उपलक्षण (बोधार्थं उदाहरणरूप) है। वास्तव में कोट (दुर्ग=किला) के नामाक्षर से जो नक्षत्र हो अथवा शत्रु के नाम से जो नक्षत्र हो उसी को आदि (प्रथम) करके नक्षत्रों का न्यास करना चाहिये और तत्काल जिस नक्षत्र में जो ग्रह हो उसको उस नक्षत्र में लिख कर फल का विचार करे। तथा कोटचक्र के मध्यम चतुरस्र को वरण (प्राकारस्थानीय) समझना चाहिये ॥ ५८ ॥

यथा-कोटचक्र स्वरूप—

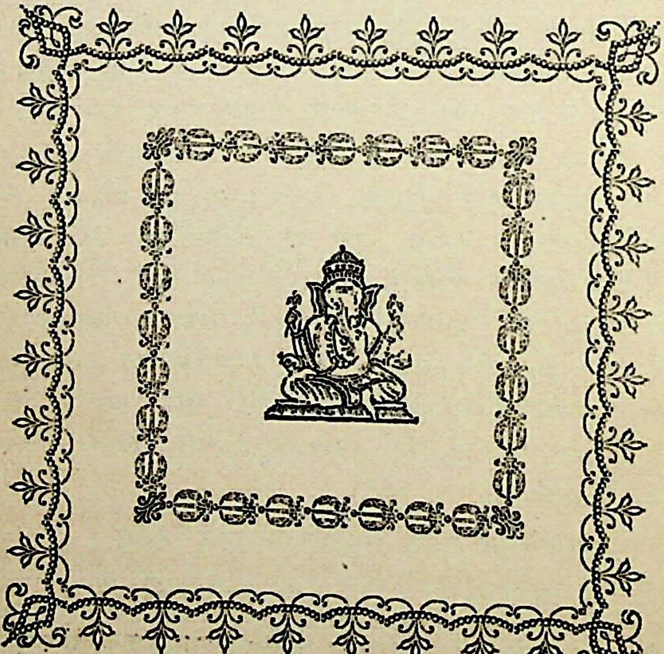

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Δ:86 15264

सामान्य कोटचक्र—

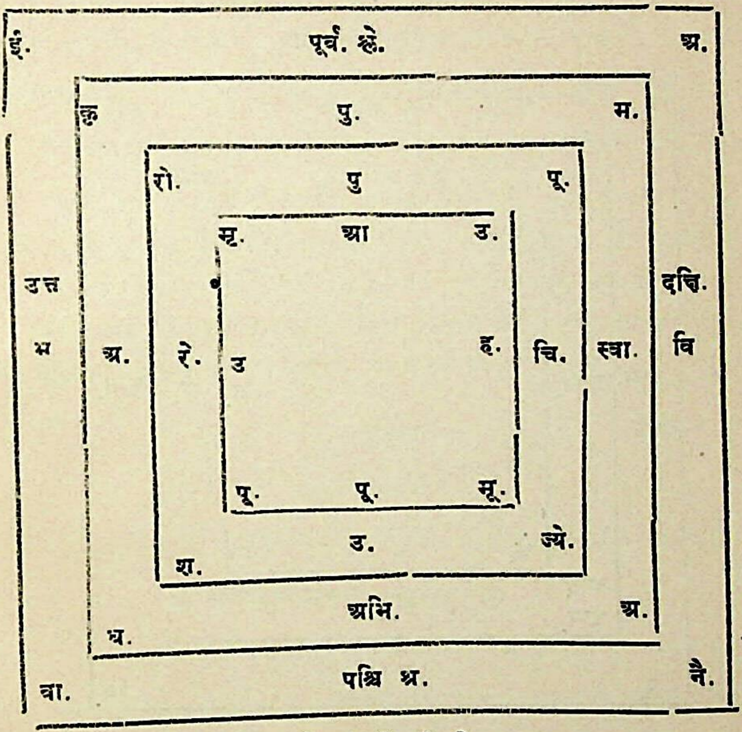

पाप और शुभग्रहों की स्थिति के अनुसार-फल

क्रूरा अन्तर्बाह्यगाः सौम्यखेटा दुर्गे भङ्गो वेष्टके वैपरीत्यात् ।
क्रूरा मध्ये वप्रगाःसौम्यखेटा भेदो भङ्गश्चात्र युद्धं विनापि।।५९।।

उक्त कोटचक्र में यदि पापग्रह भीतर और शुभग्रह बाहर हो तो कोट (किला) का भङ्ग, इससे विपरीत (यदि शुभग्रह भीतर और पापग्रह बाहर) हो तो वेष्टक (चढ़ाई करने के लिये आये हुए शत्रु) का ही भङ्ग (पराजय) समझना। एवं यदि पापग्रह मध्यमें और शुभग्रह परकोट के भीतर हो तो बिना युद्ध के भेद द्वारा भङ्ग (पराजय) कहना चाहिये ॥ ५९ ॥

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उदाहरणार्थ चक्र में ग्रहस्थिति—

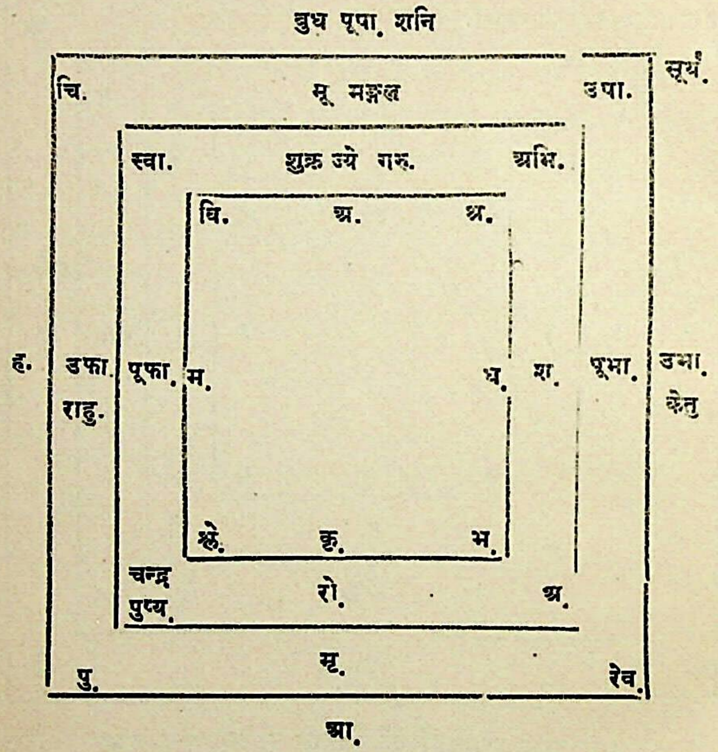

संवत् २०१६ शाके १८८१, माघ शुक्ल द्वितीया शुक्रवार के दिन "रामगढ़" नामक कल्पित किले का शुभाशुभ विचार करना है। (अवकहडा चक्रानुसार) किले का नक्षत्र चित्रा से आरम्भ कर उपरोक्त विधि से नक्षत्र न्यास किया और उस दिन (पञ्चाङ्गानुसार) सूर्य–उत्तरापाढ़में, चन्द्रमा–पुष्यमें, मङ्गल–मूलमें, बुध–पूर्वापाढ़में, गुरु–ज्येष्ठामें, शुक्र–ज्येष्ठामें, शनि–पूर्वापाढ़ में, राहु–उत्तरफाल्गुनीमें और केतु–उत्तरभाद्रपद नक्षत्र में है।

इस प्रकार यहाँ प्रायः सभी पापग्रह किले (परकोट) के बाहर में पड़े हैं अतः इस दिन यायी किले पर चढ़ाई करे या (प्रश्न-कालिक ऐसी ग्रहस्थिति में)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोई शत्रु (यायी) के आने से किला भङ्ग होगा या नहीं ऐसा प्रश्न करें तो किला भङ्ग नहीं होगा अर्थात् यायी राजा की पराजय कहनी चाहिये।

व्यत्यासे त्वावेष्टकस्यैव भङ्गो दुर्गे भग्नेऽप्युद्भवे नात्र मिथ्या।
प्राकारेऽन्तः क्रूरखेटा वहिश्चेत् सौम्याः कृच्छ्राद्दुर्गभङ्गस्तदानीम्॥

उक्त स्थिति से विपरीत अर्थात् शुभग्रह कोट के मध्य में और पापग्रह कोट के उपर हो तो वेष्टक (चढ़ाई करने वाले) का ही भङ्ग होता है। कदाचित दुर्ग का भङ्ग भी हो तथापि वेष्टक की पराजय ही होती है, यह मिथ्या नहीं समझना। यदि प्राकार (परकोट) के भीतर पापग्रह और इससे बाहर शुभग्रह हो तो बहुत कठिनाई के साथ दुर्ग का भङ्ग कहना चाहिये ॥६०॥

पुनः विशेष

वप्रे बाह्ये क्रूरखेटाश्च मध्ये
सौम्याः खण्डः स्यान्न दुर्गस्य भङ्गः।
वप्रे सौम्या अन्तरा बाह्यतश्च
क्रूरा भङ्गः सैन्ययोः स्याद् द्वयोस्तु ॥६१॥

यदि वप्र (कोट) पर पापग्रह और शुभग्रह मध्य (भीतर) में हो तो कीले की कुछ क्षति मात्र होती है, भङ्ग नहीं होता है। यदि वप्र (किले) में शुभग्रह हो तथा बाहर और भीतर पापग्रह हो तो यायी और स्थायी दोनों की सेनाओं का समान रूपसे भङ्ग (विनाश) होता है ॥६१॥

वप्रे क्रूरा बाह्यमध्ये तु सौम्या–
स्तुल्यं युद्धं खण्डपातोऽन्वहं च।
वप्रे बाह्येऽन्तर्यदा क्रूरसौम्याः
घोरे युद्धे स्याद् द्वयोर्भङ्ग एव ॥६२॥

यदि वप्र (परकोट) में पापग्रह और बाहर भीतर शुभग्रह हों तो दोनों की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सेना में समान युद्ध और समान चाति होती है। तथा यदि कोट, बाहर और भीतर तीनों स्थानों में पाप और शुभग्रह मिश्रित हों तो घोर संग्राम के बाद दोनों दल की सेना का विनाश होता है ॥६२॥

तुल्या बाह्येन्तश्च चेत् क्रूरसौम्याः
सन्धिर्वाच्यो यायिदुर्गेशयोस्तु ।

यदि कोटचक्र के बाहर और भीतर तुल्य ही शुभ या अशुभ ग्रह हों तो यायी और स्थायी दोनों में सन्धि हो जाती है।

ज्ञारौ स्तंभक्ष प्रवेशेपि वा चेत्
चन्द्रो जीवत्पक्षगः स्यात् प्रवेशे ॥६३॥
रुन्ध्याद् दुर्गं वाऽकुलौघेऽथ युद्धं
व्यत्यासेनान्तस्थसैन्यं विदध्यात् ।
दिद्वीज्यारौ काव्यवक्रस्थसौम्यौ
दुर्गे भङ्गं निर्दिशन्ति क्रमेण ॥६४॥

यदि बुध और मङ्गल स्तम्भ नक्षत्र या प्रवेश (कोण) नक्षत्र में तथा चन्द्रमा जीवपक्ष नक्षत्र या प्रवेश नक्षत्र में अथवा अकुलगण नक्षत्र में उस समय यदि यायी किले पर चढ़ाई करे तो विजय होती है। यदि इससे विपरीत (बुध, मङ्गल निर्गम नक्षत्र में, चन्द्रमा मृतपक्ष में या कुलगणनक्षत्र में) हो, ऐसे समय में युद्धारम्भ होने से स्थायी (दुर्गाधिपति) शत्रु सेना को नष्ट कर देता है। यदि युद्ध समय में पूर्वदिशामें बृहस्पति, दक्षिणमें मङ्गल, पश्चिममें शुक्र और उत्तर दिशा में वक्री बुध हो तो अपने अपने दिशा के दुर्ग को भङ्ग करता है ॥६३-६४॥

पुनःविशेष

यत्र क्रूरस्तेन युक्तः शशी वा खण्डस्तत्रैतत् पथे च प्रवेशः ।
क्रूराः स्तंभर्क्षे यदान्तस्तदानीं दुर्गं मुक्त्वायाति दुर्गाधिनाथः ॥६५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बनाये हुए कोट चक्र के दुर्ग रेखा में जहाँ पापग्रह से युक्त चन्द्रमा हो वहीं दुर्ग का भङ्ग होता है और उसी मार्ग से शत्रु की सेना किले में प्रवेश करती है। यदि स्तम्भनचाग्र और भीतर के नचाग्र में पापग्रह हो तो दुर्गाधिपति (स्थायी) किलें को छोड़कर भाग जाता है ॥६५॥

और भी विशेष

निर्गत्यर्क्षे बाह्यगे वक्रितश्चेत्
क्रूरः खण्डं निश्चितं तत्र कुर्यात्।
वप्रस्थोन्तर्हन्ति मध्यं प्रवेश-
र्क्षे वक्री चेद्धन्ति बाह्यस्थसैन्यम् ॥६६॥

यदि बाहर के निर्गमनक्षत्र पर वक्रगति पापग्रह हो तो उस स्थान में निश्चय किला का भङ्ग होता है। वप्र पर स्थित नचाग में वक्री पापग्रह हो तो भीतरवाले (स्थायी) की सेना का नाश करता है। तथा कोट के भीतर प्रवेश नचाग में वक्री पापग्रह हो तो बाहरवाले (यायी) की सेना का नाश होता है ॥६॥

यायी-स्थायी का कर्तव्य

दुर्गे तदीशभजयोरिति कोटयोस्तु
भङ्गं विचार्य दिशि तत्र लगन्तु बाह्याः।
आभ्यन्तरा बलपभोत्थितचक्रदोषे
सेनान्यमन्यमुपदिश्य दिशोप्यवन्तु ॥६७॥

यायी (चढ़ाई करनेवाले) को चाहिए कि—पूर्वकथित रीति से दुर्ग के नक्षत्र और दुर्गेश (स्थायी) के नक्षत्र से प्रारम्भ कर ईशानादि कोण के क्रम से नक्षत्रों का न्यास करके किले के जिस स्थान पर भङ्ग का लक्षण देखने में आवे उसी दिशा में उसी स्थान पर अपनी सेना को लगावे तो किले का भङ्ग होकर विजय होती है। इसी प्रकार स्थायी (दुर्ग में रहने वाले) को चाहिए कि उक्त रीति से अपने सेनापति के नक्षत्र से विचार कर देखे, यदि किले का भङ्ग लक्षण प्राप्त हो तो उस सेनापति को बदल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर जिसके नाम नक्षत्र से किले की रक्षा होती हो उस सेनापति को नियुक्त करे तथा जहाँ भङ्ग लक्षण देखने में आवे वहाँ विशेषरूप से रक्षा के लिए सेना को नियुक्त करे ॥६७॥

टिप्पणी ग्रन्थान्तर—

"अथातः संप्रवक्ष्यामि कोटचक्रस्य निर्णयम्। स्तोकारिः कुरुते यत्र भूरिसैन्यपराभवम् ॥१॥ यस्याश्रयबलादेव राज्यं कुर्वन्ति भूतले। विग्रहं चतुराशासु सीमास्थैः शत्रुभिः सह ॥२॥ विषमं दुर्गमं घोरं चक्रं भीरुभयावहम्। कपिशीर्षैस्तु शोभाढ्यं रौद्राट्टालकमण्डितम् ॥ प्रतोली यस्य काला स्यात् परिखा कालरूपिणी। रणतुकृताटोपं डिङ्कुलीयन्त्रयन्त्रितम् ॥४॥ मुसलैर्मुद्गरैः पाशः कुन्तखड्गैर्धनुः शरैः। संयुतैः सुभटैः शूरैरिति दुर्गं समादिशेत् ॥५॥

अथ सर्वतोभद्रचक्र

पूर्वोदीचीर्लिखालीर्नयनयगणिताः कन्दकोष्ठेष्वथैशात्
कोणेतोयस्वरान्वह्नचुडुत इह दिगालीषु भान्यन्तरा तु।
नारीवर्णान् पुरोक्तानवकहडमुखानंतरास्मावृषादील्
खेटाच् सम्बन्धिवारैः सह लिख च तिथीन् मध्यतो नन्दिकादीन्॥
ऐन्द्रचादि मध्यभचतुष्कवेधतो वेधमादिशेत् क्रमशः।
घङच्छां षणठां धफढां थझञमिति सर्वतोभद्रम् ॥६९॥

सम और समानान्तर १० (दश) रेखा पूर्वापर और १० रेखा याम्योत्तर खींचने से एक ८१ कोष्ठ का वर्गचक्र बनता है। ८१ कोष्ठ भी प्रत्येक वर्गाकार ही होते हैं। उसमें ईशानकोण से नैऋत्य और अग्निकोण से वायव्य कोण तक कर्ण रेखा लगावें तथा पूर्वापर और याम्योत्तर रेखाओं में दो-दो रेखाओं के अग्र में कर्णाकार रेखा लगाने से वेधज्ञानोपयुक्त सर्वतोभद्रचक्र बन जाता है। इस प्रकार एक बृहद्वर्ग चक्र में ८१ लघुवर्ग चक्र कोष्ठ होते हैं। जिनमें कोणस्थ कर्ण रेखाश्रित १६ कोष्ठों में ईशानकोण से प्रारम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से—अ-आ-इ-ई आदि १६ स्वरों को लिखें।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर पूर्वादिदिशाओं में जो ऊपरवाले ७, ७, कोष्ठ हैं, उनमें कृत्तिका आदि ७, ७ नक्षत्र चारों दिशाओं में लिखें। उसके नीचे जो पूर्वादि दिशाओं में ५, ५ वर्णकोष्ठ हैं, उनमें क्रम से अवकहड, मटपरत, नयभजख, गसदचल इन बीस अक्षरों को लिखें। पुनः पूर्वादि दिशाओं में ही उसके नीचे जो ३, ३ वर्णकोष्ठ हैं, उनमें क्रम से वृष-मिथुन-कर्क, सिंह-कन्या-तुला, वृश्चिक-धनु-मकर, कुम्भ-मीन-मेष इन १२ राशियों को लिखें। उसके नीचे पूर्वादिदिशाओं में जो एक एक कोष्ठ हैं, उनमें क्रम से नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता तिथियों को लिखकर बीचवाले एक कोष्ठ में पूर्णातिथि लिखें। एवं पूर्वादि दिशाओंमें जो मध्य के ४, ४ कोष्ठ हैं, उनमें क्रम से घङछ, पणढ, धफढ, थझञ ये तीन तीन वर्ण लिखकर एक रेखा में स्थित ग्रहों का वेध विचारकर फल समझें। इस चक्र को 'सर्वतोभद्रचक्र' कहते हैं ॥६८-६९॥

स्पष्टार्थ सर्वतोभद्रचक्र—

अ	कृ	रो	मृ	घङछ आ	पु	पु	श्ले	आ
भ	उ	अ	व	क	ह	ड	ऊ	म
अश्वि	ल	लृ	वृष	मिथुन	कर्क	ॡ	म	पू
रे	च	मेष	ओ	नन्दा सू मं	औ	सिंह	ट	उ
उभा	द	मीन	रिक्ता शु	पूर्णा श	भद्रा चं बु	कन्या	प	ह
पू	स	कुम्भ	अः	जया बृ	अं	तुला	र	चि
श	ग	ऐ	मकर	धन	वृश्चि	ए	त	स्वा
ध	ॠ	ख	ज	भ	य	न	ऋ	वि
ई	श्र	अभि	उ	पू धफढ	मू	ज्ये	अनु	इ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वेधजानने का उदाहरण

प्रथमाग्रचभस्थखेटो विध्येत् कोणस्थितानचश्चतुरः ।
तिथिमपि पूर्णां न शुभः क्रूरजवेधः शुभः शुभजः ॥७०॥

कोण में जो प्रथम और उसके आगे के दो-दो नक्षत्र हैं, उनमें स्थित पाप या शुभग्रह उस कोण रेखा स्थित ४ स्वरों को बेधता है। जैसे—ईशानकोण में स्थित प्रथम भरणी और उसके अग्रिम कृत्तिका है अतः जो ग्रह भरणी या कृत्तिका में होगा वह अ-उ-लृ-ओ इन ४ स्वरों को और पूर्णातिथि को भी वेध करेगा। एवं अग्निकोणस्थ आश्लेषा मघा में स्थित ग्रह कर्णरेखास्थ आ-ऊ-लॄ-औ इन ४ स्वरों और पूर्णातिथि को बेधता है। तथा नैऋत्य कोणस्थ विशाखा, अनुराधा स्थित ग्रह इ-ऋ-ए-अं इन ४ स्वरों और पूर्णातिथि को एवं वायव्य कोणस्थ श्रवण, धनिष्ठा में स्थित ग्रह ई-ॠ-ऐ-अः इन चार स्वरों और पूर्णातिथि को वेध करेगा। इस प्रकार दिशा स्थित सब नक्षत्रों से अपनी अपनी कर्णरेखा स्थित नक्षत्र, स्वर, तिथि, वार राशि इन पांचों का वेध विचार करना चाहिए। क्रूरग्रह के वेध से अशुभ और शुभग्रह के वेध से शुभ फल होता है ॥७०॥

विशेष—सूर्य, मङ्गल, शनि, राहु और केतु क्रूर (पाप) ग्रह हैं, बृहस्पति और शुक्र शुभग्रह हैं। पापग्रह से युक्त होने पर बुध भी पापी हो जाता है (अर्थात् बुध पापग्रह से युक्त हो तो पापफलप्रद और शुभग्रह के साथ होने से शुभफलप्रद हो जाता है)। एवं क्षीण (अर्थात् कृष्णपक्ष की अष्टमी से शुक्लपक्ष की सप्तमी तक का) चन्द्रमा भी क्रूर और पूर्ण (शुक्लपक्ष की अष्टमी से कृष्णपक्ष की सप्तमी तक का) चन्द्रमा शुभ है।

वक्र और मार्गगतिग्रहों का वेधक्रम

वक्री दक्षं कर्णगत्याथ वामं शीघ्रा विध्येदीक्षतेग्रे समस्तु ।
नित्यं वक्री राहुकेतू इनेन्दू शीघ्रौ नित्यं दृग्व्यधौ तुल्यरूपौ॥७१॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वक्रगति ग्रह दक्षिण (स्व पृष्ठ भाग) कर्ण रेखा स्थित नक्षत्र-स्वर आदि को वेध करता है। तथा शीघ्र (मार्ग) गतिग्रह वाम (स्वाग्रिम) कर्ण रेखा स्थित नक्षत्रादि को वेधता है। और मध्यगति ग्रह अपने सम्मुख स्थित नक्षत्रादि को वेधता है। ग्रहों में राहु-केतु ये दोनों नित्य वक्री और सूर्य-चन्द्र नित्य शीघ्री (मार्गी) ही रहते हैं। अन्य ग्रहों को तीन प्रकार की गति होती रहती है। ग्रहों की दृष्टि और वेध तुल्यरूप समझना चाहिये ॥७१॥

एकादिग्रहों के वेध के फल

उद्वेगार्थविनाशरोगमृतिदा विध्यन्त एकादयो वर्णो
हानिरुडी भ्रमोऽचितु रुजो विद्धे तिथौ भीरपि।
राशौ विघ्नततिश्च पञ्चसु मृतिर्विध्यञ्ज्ञ ईज्यः सितः
प्रज्ञां सर्वसुखं रतिं विदधते वक्रा अतीष्टा इमे ॥७२॥

अपने नाम के अक्षर १ पापग्रह से विद्ध हो तो उद्वेग, २ पाप ग्रह से विद्ध हो तो धनहानि, ३ से विद्ध हो तो रोग और ४ पापग्रहों से विद्ध हो तो मरण होता है। एवं नाम के आदि अक्षर पापग्रह से विद्ध हो तो हानि, नक्षत्र विद्ध हो तो भ्रम, स्वर विद्ध हो तो रोग, तिथि विद्ध हो तो भय और राशि विद्ध हो तो अनेक प्रकार के विघ्न तथा यदि अक्षर आदि पांचों विद्ध हो तो मरण होता है। यदि वेधकर्त्ता बुध हो तो बुद्धि का विकाश, गुरु हो तो सब प्रकार के सुख और शुक्र का वेध हो तो स्त्री से सुख होता है। ये (बुध, गुरु, शुक्र) यदि वक्रगति हों तो अत्यन्त शुभप्रद होते हैं ॥८२॥

पुनः विशेष फल

क्रूरा वक्रेऽतीव दुष्टा रविः स्याद्यद्राशौ सा दिक्सदिश्यास्तमेति
प्राच्या ईशाशास्थिताश्च क्रमोऽयं सर्वाशासु ज्ञायतां बुद्धिमद्भिः।७३।

क्रूरग्रह वक्र होकर वेध करते हों तो अत्यन्त पापफलप्रद होते हैं। सूर्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिस राशि में हो उस राशि की जो दिशा है—वह दिशा और उस दिशा के स्वर-नक्षत्रादि सब अस्त होते हैं। तथा पूर्व दिशा में ईशानकोण, दक्षिण दिशा में अग्निकोण, पश्चिम दिशा में नैऋत्यकोण और उत्तरदिशा में वायव्य-कोण अर्थात् पूर्वदिशा की राशि हो तो पूर्व और ईशानकोण स्थित अक्षर-नक्षत्रादि को अस्त समझना। एवं अग्निकोणादि को समझें ॥७३॥

पुनः विशेष फल

अस्ताशास्थाजाद्यैः क्रूरव्यधवशात्फलं वाच्यम्।
उदिताशास्थैः सौम्यव्यध इव फलमादिशेत् श्रेष्ठम् ॥७४॥

अस्त दिशा में स्थित स्वर आदि के फल पापग्रह के वेध जन्य फल समान (अर्थात् अशुभ) समझना और उससे भिन्न उदित दिशा स्थित स्वर आदि के फल शुभग्रह के वेध समान (शुभ) समझना चाहिये ॥७४॥

जन्म-कर्म आदि नक्षत्र के वेध से फल

हानी रुक्कलहोपि पीडित इह स्याज्जन्मभेऽस्मान्नये
कर्मासिद्धिरथो भिदा चयमिते द्रव्यक्षयः स्याज्जये।
गौरे देहरुजः शरे सुखहती राज्ञोथ देशोडुनि
क्षुण्णे जात्यभिषेकयोरपि तयोस्तत्ताद्भयं निर्दिशेत् ॥७५॥

अपने जन्म (नाम) नक्षत्र में पापग्रह का वेध हो तो हानि, रोगभय और क्लेश; जन्मनक्षत्र से १० वें नक्षत्र में वेध होने से कार्य में असफलता; १६ वें में इष्टमित्रों से भी भेद (मन मुटाव), १८ वें में धनहानि, २३ वें में शरीर में रोगभय और यदि जन्मनक्षत्र से २५ वें नक्षत्र में वेध होने से सुख की हानि होती है। एवं राजा के, देश के नक्षत्र (नमादि अक्षर से अवकहडाचक्र द्वारा ज्ञात) के तथा जाति और राज्याभिषेक कालिक नक्षत्रों के वेध से उन सबों के लिये भय (अशुभ फल) समझना चाहिये ॥ ७५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साधक और साध्य (गुरु-शिष्य, पति-पत्नी आदि) के ऋण-धन अङ्क साधन

साध्यांका अकठबादयस्ततत्तुं नगभूभानुनिन्नगा दाप्ता।
रुरुमननरयनभवगाः साधके ऋणमधिकशेषतो दाप्तौ ।७६।

(१२ रेखा पूर्वापर और ७ रेखा याम्योत्तर खींचने से-११, ११ कोष्ठ के ६ पंक्ति में ६, ६ कोष्ठ का चक्र बनाता है)उनमें ऊपर के ११ कोष्ठ में क्रम से अकारादि ११ स्वर, द्वितीय पंक्ति के ११ कोष्ठ में कक्कारादि, तृतीय पंक्ति में ठकारादि, चतुर्थ पंक्ति में वकारादि अक्षर लिखें। पुनः पञ्चम पंक्ति में त-६, त-६, तं-६, न-०, ग-३, भू-४, भा ४ नु-०, नि-०, न-०, गा-३ ये ११ अंकों को स्थापन करें यह साध्य के अंक होते हैं। तथा षष्ठ पंक्ति में साधक के अंक क्रम से रु-२, रु-२, म-५, न-०, न-०, र-२, य-१, न-०, भ-४, व-४, गा-३ ये लिखें फिर इस चक्र में स्थित साध्य (स्त्री, सेवक, मित्र आदि) के नामके अक्षरों और स्वरों के सामने कोष्ठ के अंकों को जोड़कर उसमें ८ के भाग देने से जो शेष बचे वह साध्य का अंक समझना। इसी प्रकार साधक के नामाक्षर स्वरों से अंक जोड़कर ८ के भाग से शेष साधक का अंक होता है।

इसप्रकार – साधक के शेषाङ्क से साध्य का शेषाङ्क अल्प हो तो साध्य को साधक ऋण देता है, अन्यथा (साधक के शेषाङ्क से साध्य का शेषाङ्क अधिक हो तो) साध्य से ही साधक ऋण लेता है। अतः साधक का शेषाङ्क अधिक होना श्रेष्ठ है ॥ ७५ ॥

उदाहरण—जैसे रमेश और उसकी पत्नी मनोरमा का धनर्ण देखना है तो रमेश (साधक) के नीचे चक्रानुसार (र=०+अ=२+म=५+ए=१+श=०+अ=२) =१० इसी प्रकार मनोरमा (साध्य) के अंक (म=६+अ =६+न=०+ओ =०+र=३+अ =६+म=६+आ=६)=३३। इनमें पृथक्-पृथक् ८ के भाग देने से २, और १ बचता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। अर्थात् साधक रमेश का अङ्क २ मनोरमा के अङ्क १ से अधिक है। अतः मनोरमा अपने पति रमेश से ऋण प्राप्त करेगी, जिसे श्रेष्ठ कहा गया है।

ऋण-धन साधन-चक्र—

	त	त	तं	न	ग	भू	भा	तु	नि	न	गा
साध्याङ्का:	६	६	६	०	३	४	४	०	०	०	३
	अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं
	क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
	ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
	ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
	र	रु	म	न	न	र	य	न	भ	व	गा
साधकाङ्का:	२	२	५	०	०	२	१	०	४	४	३

प्रश्न से रोगी के साध्य-असाध्य रोग सम्बन्धी ज्ञान

काठ्टाद्धतोऽच्तु च विसर्गनपुंसकोने-
ष्वंकास्तुलारिभसतोभृगुकानकाः स्युः।
दूतातुराह्वयतदैक्यदभंक्तशेषे
जीवेद्गदी समधिके म्रियते समाने ॥७७॥

तिर्यक् (बायें से दाहिने ओर) क्रम से ११ कोष्ठ के चक्र लिखें फिर उसके नीचे ११, ११ कोष्ठ के पाँच पंक्ति लिखना। इनमें प्रथम (ऊपरवाले)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पंक्ति के ११ कोष्ठ में विसर्ग (अः) और नपुंसक (ऋ-ॠ-ऌ-ॡ) को छोड़कर अ, आ इत्यादि ११ स्वरों को लिखें, पुनः नीचे की पंक्तियों में क्रम से ककारादि, ठकारादि, बकारादि अक्षर लिखें। तथा पञ्चम पंक्ति में तु-६, ला-३ रि-२, भ-४,स-७, ती-६, भृ-४, गु-३, का-१, न-०, का-१ अङ्क लिखें। इस चक्र से दूत (प्रश्नकर्त्ता) और रोगी के नामाक्षरों के अंकों के पृथक्-पृथक् योग करके ८ से भाग देकर दूत के शेषाङ्क से रोगी का शेषाङ्क अधिक हो तो रोग को साध्य समझना अर्थात् रोगी जीवेगा, तुल्य या न्यून (अल्प) हो तो रोग को असाध्य समझना अर्थात् रोगी नहीं जीवेगा—ऐसा कहना चाहिये ॥ ७७ ॥

आतुरसाध्यासाध्यज्ञान चक्र—

तु	ला	रि	भ	स	ती	भृ	गु	का	न	का
६	३	२	४	७	६	४	३	१	०	१
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अं
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह

उदाहरण—जैसे मोहन रोगी है और राम दूत (प्रश्नकर्ता) इसके विषय में अच्छे होने न होने का प्रश्न करता है, तो रोगी (मोहन) के नामाङ्क (म=२ + ओ=१ + ह=१ + अ=६ + न=१ + अ=६)=१७ और दूत (राम) के नामाङ्क (र=७ + आ=३ + म=२ + अ=६)=१८ हुए। इन १७,१८ में पृथक् पृथक् ८ के भाग देने से रोगी (मोहन) का शेषाङ्क १ और दूत (राम) का शेषाङ्क २ बचे। यहाँ रोगी का शेषाङ्क दूत के शेषाङ्क से अल्प है, अतः रोगी को असाध्य कहना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रोगियों के जीवन मरण के प्रश्न में विशेष

प्रश्नाज्झलां च प्रमितिः कयुक्ता
भूयो रनिघ्ना लहृताथ शेषे ।
के जीवितं खे निरुजो मृतिर्नें
भवेच्च तिथ्यां मरणाभिधायाम् ॥७८॥

प्रश्न के समय रोगी के विषय में पूछनेवाले के मुख जितने प्रश्न में स्वर और व्यञ्जन हों उनकी संख्या के योग में १ जोड़ कर २ से गुना करे और गुणनफल में ३ के भाग देने से यदि १ शेष बचे तो रोग छूट जायगा (अर्थात् रोगी जीवेगा), २ बचे तो रोग बढ़कर छूटेगा और यदि ० (शून्य) बचे तो रोगी मर जायगा, ऐसा समझना चाहिये।

एवं (यदि यह जानना हो कि अमुक रोगी किस तिथि में मरेगा तो) वर्णस्वर के अनुसार मृततिथ का निश्चय करे। (अर्थात् रोगी के नाम के आदि अक्षर से ग्रन्थ में पूर्व कथित वर्णस्वर चक्रानुसार जो मृतस्वर हो उसी स्वर की तिथि को मरण तिथि समझना) ॥७८॥

उदाहरण—यथा मोहन रोगी है और राम दूत (प्रश्नकर्ता) कहता है कि "मोहन कब तक स्वस्थ होगा" तो इस वाक्य से अक्षरों की संख्या
म + ओ + ह + अ + न + अ + क + अ + ब + अ + त + अ + क + अ + स +
२ + ३ + १ + ६ + १ + ६ + ६ + ६ + ६ + ६ + ७ + ६ + ६ + ६ + ० +
व + अ + स + थ + अ + स + थ + अ + ह + ओ + ग + आ
४ + ६ + ० + ६ + ६ + ० + ६ + ६ + १ + १ + २ + ३ = ९५ में एक (१) जोड़ा तो ९६; इसको २ से गुना किया तो १९२ हुए इसमें ३ का भाग दिया तो शेष शून्य (०) बचा । अतएव रोगी (मोहन) मर जायगा।

एवं मोहन की मरण तिथि का निश्चय करना है तो (वर्णस्वर चक्रानुसार) मोहन का 'इ' बाल, 'उ' कुमार, 'ए' युवा, 'ओ' वृद्ध, 'अ' मृतस्वर (अर्थात् 'अ' मृतस्वर की नन्दा तिथि) की प्रतिपदा, षष्ठी या एकादशी तिथि के दिन मृत्यु होगी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छायापुरुष दर्शन और उसके फल

प्रातः पृष्ठगते रवावनिमिषं छायां गले स्वां चिरं
दृष्ट्वोर्ध्वं नयनेन यत्सिततरं छायानरं पश्यति ।
तत्कर्णांसकरास्यपार्श्वहृदयाभावेक्षणोर्काश्वदिग्-
भूरामाब्धिसमाः शिरोविगमतो मासांस्तु षड् जीवति।।७६।।

प्रातः समय पूर्वाह्न में सूर्य को पीठ भाग में करके (पश्चिमाभिमुख खड़ा होकर) अपनी छाया के गर्दन भाग को आँख के पलक गिराये बिना कुछ देर (एक, दो मिनट) तक देखकर आँखों को ऊपर उठाकर आकाश की तरफ देखने से स्वच्छवर्ण अपनी छाया (प्रतिबिम्ब) देखने में आती है उसको छाया पुरुष कहते हैं । यदि उसके (छायापुरुष के) कान, कन्धा, हाथ, मुख, पार्श्व या हृदय ये अङ्ग या इनमें कोई अङ्ग देखने में नहीं आवे तो क्रम से १२, ७, १०, १, ३, २ वर्ष तक जीवन (आयु) समझे और यदि छायापुरुष का मस्तक नहीं देखने में आवे तो केवल ६ मास तक ही वह जीवित रहता है ।।७६।।

स्पष्ट ज्ञानार्थ चक्र—

अभाव अङ्ग	कान	कन्धा	हाथ	मुख	पार्श्व	हृदय	मस्तक
आयु वर्ष	१२	७	१०	१	३	२	$\frac{१}{२}$

पुनः विशेष

हृद्रंध्रदृष्टया मुनिसंख्यमासान् द्विदेहदृष्टौ तु मृतिस्तदैव ।
सम्पूर्णादृष्टौ तु न वर्षमध्ये रोगो मृतिर्नेति वदन्ति सत्यम्।।८०।।

यदि छाया पुरुष के हृदय में छिद्र देखने में आवे तो ७ मास, दो (२)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शरीर देखने में आवे तो शीघ्र मरण होता है। यदि छायापुरुष के सब अङ्ग देखने में आवे तो उसको १ वर्ष तक किसी प्रकार का रोग भी नहीं होता, मृत्यु तो निश्चितरूप से नहीं होती—ऐसा मुनियों ने सत्य कहा है ॥८०॥

अन्य शकुन और उसका फल

स्नातस्य पूर्वं कर्णादेः शोषे प्रागुक्तवत्फलम् ।
सर्वाङ्गार्द्रस्य हृच्छोषे षण्मासाभ्यन्तरे मृतिः ॥८१॥

स्नान करने के बाद यदि कान, कन्धा, हाथ, मुख, पार्श्व, हृदय और मस्तक पहिले ही सुखे तो क्रम से पूर्वोक्त फल समझना (जैसा ऊपर ७९ श्लोक के चक्र में स्पष्ट लिखा है)। यदि स्नान के बाद सब अङ्ग तो भींगा रहे और हृदय पहिले ही सूखजाय तो ६ महीने के भीतर ही मरण समझना चाहिये ॥ ८१ ॥

अन्य प्रकार के शकुन से फल

हस्ते न्यस्ते शिरसि यदि न च्छिन्नदण्डोऽस्य दृष्टः
षण्मासान्तर्न मरणभयं सम्पुटे हस्तयोस्तु ।
न्यस्ते शीर्षे यदि च कदलीकोरकाभं तदन्त-
र्दृष्टं नो भीस्तरति सलिले चेत् स्वशेफो न मृत्युः ।८२।

यदि अपने एक हाथ को (दोनों नेत्र के बीच से) मस्तक पर रखने से हस्तदण्ड (पहुँचा) टूटा सा नहीं दीखपड़े (अर्थात् हस्तदण्ड समस्त देखने में आवे) तो ६ महीने तक मरण का भय नहीं समझना। यदि इसीप्रकार दोनों हाथ को सम्पुटित करके (जोड़कर) मस्तक पर रखने से दोनों हाथ का मध्यभाग (सम्पुटित हाथ का पोल) केला की कोर (कोशा = लाल-कली) के समान देखने में आवे तो भी ६ महीने तक मृत्यु या रोगादि भय नहीं समझना चाहिये। एवं नदी या तालाब के जल में पैठने से अपना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिङ्ग (मूत्रेन्द्रिय) जल में तैरने लगे (अर्थात् नहीं डूबे) तो भी ६ महीने तक मरण आदि का भय नहीं समझना ॥ ८२ ॥

उक्त शकुनों की उपयोगिता

इमानि चिह्नानि विचार्य योद्धुं
विनिश्चये स्वायुष एव यायात् ।
आर्हुहि मुख्यं शकुनं स्वदेह-
चिह्नानि बाह्यैः शकुनैः कि मन्यैः ।। ८३ ।।

योद्धा आदि जनों को चाहिये कि उक्त शकुनों के द्वारा अपने जीवन (आयु) को विचार करके ही कहीं युद्ध या दूर यात्रादि करे, क्योंकि अपने शारीरिक शकुनों को ही मुनीश्वरों ने मुख्य कहा है। इसलिये शारीरिक शकुन श्रेष्ठ हो तो बाह्य (बाहरी) अन्य शकुनों (पूर्णकलश-दर्पण-दर्शन आदि) की कुछ गणना नहीं है ॥ ८३ ॥

ग्रन्थ समाप्ति में पाठकों के लिये आशीर्वाद

सकलस्वरशास्त्रसारमेतत्परिसंक्षिप्य मया न्यगादि सर्वम् ।
गुरुभक्तिजुषोऽथ धर्मवृत्तेः स्फुरतादेतदभीप्सितार्थसिद्ध्यै ८४

समस्त स्वरशास्त्रों के सार संग्रह करके मैंने संक्षेप में इस (समरसार नामक) ग्रन्थ को लिखा है। यह गुरुभक्त और धर्माचरणवाले (साधकों) के लिये अभीष्ट सिद्ध्यर्थ होवे ॥ ८४ ॥

ग्रन्थकार वंशपरिचय

वंशे वत्समुनीश्वरस्य शिवदासाख्यादुरुख्यातितः
सम्राडग्निचिदाप यस्य जनकः श्रीसूर्यदासोऽजनि ।
यन्मातुर्यशसा दिशो दश विशालाढ्या वलक्षा व्यधात्
स प्राज्यस्वरशास्त्रसारविचितं रामो वसन्नैमिषे ।८५।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वत्समुनीश्वर के वंश में उत्पन्न पृथ्वी पर विख्यात कीर्ति शिवदास के पुत्र-अग्निहोत्र करनेवाले 'श्रीसूर्यदास' जिनके पिता और अपने सुयश से दशों दिशाओं को धवलित करनेवाली जिनकी माता है—'विशालाक्षी', ऐसा "राम" (रामचन्द्र) नाम का (ग्रन्थकार) नैमिषारण्य क्षेत्र में वास करता हुआ अनेक स्वरशास्त्र के ग्रन्थों का सार इस (समरसार नामक) ग्रन्थ को बनाया ॥ ८५ ॥

ज्योतिर्विदग्रगण्यस्य विख्यातयशसो गुरोः ।
ज्यौतिषाचार्यवर्यस्य श्रीसीतारामशर्मणः ॥
पदाब्जाल्लब्धबोधेन वासुदेवेन निर्मितः ।
ज्योतिसमरसाराख्यो ग्रन्थो भाषार्थसंयुतः ॥
सन्मार्ग्यां वैक्रमे वर्षे नगाभ्रनखसम्मिते ।
श्रीमद्गुरुपदाम्भोज-कृपया पूर्णतां गतः ॥

इति राजस्थानमण्डलान्तर्गत 'विसाऊ' ग्रामनिवासि-श्रीनागरमल—
गुप्तात्मजदैवज्ञवाचस्पति-श्रीवासुदेवगुप्तसम्पादितः
सोदाहरणभाषार्थसहितः समरसारः समाप्तः ।

समाप्तोऽयं ग्रन्थः

★

॥ शुभम् ॥
मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी ।
आगत क्रमांक 1621
दिनाक
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दैवज्ञवाचस्पति-श्रीवासुदेवगुप्तकृतपुस्तकानि—

ग्रहफलदर्पण	१-५०
जातकाभरण	४-००
मुहूर्तचिन्तामणि	३-००
बृहज्ज्योतिषसार	४-५०
लग्न विवेक	०-२५
आर्या सप्तति	०-३१
समर सार	१-२५
कूपोत्सर्गपद्धति	०-१६
अवकहड़ाचक्रसहित ज्योतिषदर्पण	२-००
वर्णव्यवस्था का संक्षिप्त इतिहास	१-५०
भविष्यवक्ताओं का प्रलाप	०-२५

प्रकाशक व विक्रेता—

श्री अन्नपूर्णा प्रकाशन

डी० १०।५४ विश्वनाथगली, वाराणसी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri